रामायण में जीवनदृष्टि

सात प्रेरक प्रवचन

प्रवचनकार

पूज्य मुनिराजश्री भद्रगुप्तविजयजी

श्री विश्वकल्याण प्रकाशन जयपुर
की हिन्दी-साहित्य की पंचवर्षीय
योजना के अन्तर्गत चतुर्थ वर्ष का

तृतीय पुष्प

[योजना की १५ वी पुस्तक]

प्रकाशक
श्री विश्वकल्याण प्रकाशन
आत्मानन्द जैन सभा भवन
घी वालो का रास्ता, जयपुर

मानद मंत्री
हीराचन्द वैद
पारसमल कटारिया

मूल्य २/ रुपया

वि. स. २०२९, माघ

मुद्रक:
श्री जैनोदय प्रिंटिंग प्रेस
चौमुखीपुल, रतलाम (म. प्र)

प्रकाशकीय

श्री विश्व कल्याण प्रकाशन, अपनी पचवर्षीय योजना के अ तर्गत चौथे वप की तीसरी पुस्तक, कुछ देरी से प्रकाशित कर रहा है। सस्था के सव सदस्य विलब के लिये क्षमा करे।

'रामायण मे जीवनदृष्टि' पूज्य गुरुदेव श्री के बबई-सायन-चातुर्मास मे दिये गये प्रवचन हैं। प्रवचना का मकलन-सपादन श्रीयुत लालच द के शाह [बवई] ने किया है। सवप्रथम ये प्रवचन गुजराती मे छपे है। उन प्रवचनो का हिन्दी अनुवाद हुआ, और उसमे श्रीयुत ओमप्रकाश पी शर्मा [रतलाम] ने सशोधन किया तत्पश्चात् तीसरे प्रवचन से पुन हि दी अनुवाद पडितवय श्रीयुत बसतीलालजी नलवाया ने किया है। हम इन सब सज्जनो के आभारी हैं।

रामायण हमारे देश मे प्रचलित ग्र थ है। रामायण के पात्र भी जन-साधारण के सुपरिचित हैं, परन्तु हमारे जीवन के साथ इन पात्रो के आदर्शों का कसे जोडा जाय, यह बात इन प्रवचना मे कही गई है।

वाल्मीकि रामायण से जैन रामायण कहाँ-कहाँ भिन्नता प्रदर्शित करती है और इस भिन्नता मे किस प्रकार यथार्थता है—ये बाते आप इस पुस्तक में पायेगे ।

जैसे प्रवचन सुनने का आनन्द है वैसे प्रवचन पढ़ने का भी आनन्द है । आप शान्ति व स्वस्थता से इन प्रवचनो को पढ़े और अपने जीवन मे नयी ज्ञानदृष्टि प्राप्त करे, यही शुभ-कामना है ।

प्रवचनों के सपादन व प्रकाशन मे कोई त्रुटि रह गई हों तो हमे क्षमा करे ।

जयपुर
५-१-७३

निवेदक
हीराचन्द वैद
पारसमल कटारिया

श्री विश्वकल्याण प्रकाशन-जयपुर •

हमारा हिन्दी साहित्य

लेखक -पूज्य मुनिराजश्री भद्रगुप्तविजयजी म सा

(१) ज्ञानसार भाग १
(२) ज्ञानसार भाग २
(३) लकापति
(४) अजना
(५) अयोध्यापति
(६) वनवास
(७) युद्ध और मुक्ति
(८) तीन तारे
(९) वासना और भावना
(१०) जय शत्रुजय
(११) जीवन वैभव
(१२) भव-भ्रमण
(१३) प्रिय कहानियाँ भाग १
(१४) प्रिय कहानिया भाग २
(१५) रामायण मे जीवनदृष्टि

पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत प्रकाशित होने वाला साहित्य

(१) प्रकाश के पथ पर

(२) पथ के प्रदीप

(३) अन्तरनाद

(४) लव—कुश

(५) रामनिर्वाण

हर्ष

पचवर्षीय योजना इस वर्ष के अन्त तक पूर्ण हो जायेगी। सदस्यो को २० पुस्तक देने का वादा पूर्ण हो जायेगा। हमे खूब प्रसन्नता व खूब गौरव है कि ऐसा नैतिक—धार्मिक व आध्यात्मिक साहित्य प्रकाशित करने का हमे शुभ अवसर प्राप्त हुआ और हम हमारे वचनो का पालन कर सके।

मानद मत्री

रा
मा
य
ण
में
जीवनदृष्टि

प्रथम प्रवचन

मानव जीवन सबधी विचार :

भारत मे तथा भारत के वाहर सब जगह जहाँ भी मनुष्य जीवन है जहा जीवन सम्बन्धी विचार है, वहा सब जगह मनुष्य के जीवन का बहुत ऊचा मूल्याङ्कन किया गया है। विश्व के धर्मो-पूव और पश्चिम के धर्मा और सब दार्शनिको ने यत्र-तत्र-सवत्र मनुष्य जीवन का श्रेष्ठ मूल्याङ्कन किया है। विश्व का जीवन भिन्न भिन्न प्रकार का है-पशुओ का, पक्षियो का एव सूक्ष्म कीटाणुओ का भी जीवन है। एकेन्द्रिय से लेकर पञ्चेन्द्रिय तक के जीवो का जीवन प्रत्यक्ष है। देवताओ और नारकिया का जीवन परोक्ष है। हम जितन जीवो के जीवन की तुलना करते है उन सवमे मनुष्य जीवन ही सर्वोपरि माना जाता है, जिसमे श्रेष्ठ मानव जीवन हमको प्राप्त हुआ है।

हम को इस वात का विचार करना चाहिये कि यह जीवन किस प्रकार व्यतीत किया जाये। जो मनुष्य जीवन का मूल्याकन नही करता उस मनुष्य का जीवन इस प्रकार यापन करने मे आता है जैसे एक तुच्छ वस्तु के साथ व्यवहार किया जाता है। जैसा व्यवहार भोजनालय के रद्दी कपडे के साथ, वैसा व्यवहार इस जीवन के साथ। इसलिये हमे गम्भीरता से एव स्वस्थता पूर्वक जीवन के सम्वन्ध मे विचार करना चाहिए। हम विचार करे कि 'अन्य जीवो की अपेक्षा यह जीवन मुझे क्यों मिला है ?' इस विश्व में सप्रति लगभग साढ़े तीन अरव मनुष्य है, उनमें से लूले लंगडे वहरे आदि अपग मनुष्यों की सख्या यदि कम कर दी जाय तो यह सख्या और भी कम हो जाती है। मानसिक दृष्टि से या मानसिक शक्ति से यदि विचार किया जाये तो साढ़े तीन अरव में से कुल विचारवान् मनुष्य कितने होंगे ? यदि अविकसित मस्तिष्क वालों की सख्या इसमे से और निकाल दी जाय तो यह सख्या और भी कम हो जाती है। अव विचार कीजिए कि अपने को कैसा विचारशील मस्तिष्क मिला है ? जो सार-असार, हेय-उपादेय, स्वीकार्य-अस्वीकार्य और विवेक-अविवेक का विचार कर सकता है ऐसा मन वहुत थोडे जीवो को प्राप्त होता है जिसका कोई मूल्य नही हो सकता, यह अमूल्य है। मानव का ही ऐसा जीवन एव ऐसा मन है!

मानव शरीर : लाखों की सम्पत्ति :

अमेरिका की एक घटना है कि एक मनुष्य अपने जीवन से इतना निराश व हताश हो चुका था कि उसने विचार किया कि 'आत्म हत्या कर के मर जाऊं।' मरने की दृष्टि से वह

घर के वाहर निकल जाता है। समुद्र मे कूद कर प्राण त्याग करना चाहता है। वह रास्ते मे चलते हुए एक बोड पढता है 'यहाँ मानसिक चिकित्सा (ट्रीटमेन्ट) हाती है,-नेपालियन हील।' इस निराश मनुष्य न विचार किया कि 'मुझे मरना ता है ही, तो क्यो न पहले इससे हो मिल आऊ।' वस, वह अग्रसर हाना है जल्दी-जल्दी सीढिया चढ जाता है, उपर पहुचता है। सामने डाक्टर बैठा हुआ है, वह भी उसके सामन जाकर बैठ जाता है। हील उसस पूछता है—

'भाई, तुम दु खी हो ?"

'दु खी न होता तो यहाँ क्या आना ? पहल यह बताइए।'

"क्या दु ख है ?" हील ने पूछा।

'वाट पर जो तुमने लिख रखा है वही! मन दु खी है, चचल है आत्म-हत्याथ समुद्र मे कूदने के लिए निकला हूँ! तुम मुझे बचा सकने हा या नही ? बताओ।"

'Sorry please (सॉरी प्लीज) मैं तुम्ह बचान मे असमय हूँ।'

ता फिर इस वोड का नीचे उतार फको, आपने व्यथ ही यह बोड क्या लगा रखा है ? लागो को ठगने के हेतु ?' कह कर वह यथा शीघ्र नीचे उतर गया। जब चार सीढियाँ शेप रही ता उसे हील न बुलाया।

अरे भाई रुकिये, तुम्हारा दु ख दूर कर सकने योग्य एक चिकित्सक है, याद आया,।

'मरा दु ख दूर करने वाला।'

'हा' वापिस आओ। जो तुम्हारी सहायता कर सकता है उसी से तुम्हारा परिचय करा देता हूं, वह अवश्य ही तुम्हारा दुःख दूर कर देगा'।

'अब भाषण दिये बिना जल्दी बताओ।'

हील उसे कमरे मे ले गया और एक कुर्सी पर बैठाया।' फिर उससे कहा 'देखो इस कमरें मे वह आदमी मिलेगा। फिर नेपोलियन वहाँ से चला गया। सामने दीवार थी, पर्दा स्वतः सरकने लगा और सरक कर किनारे तक आ गया, कुर्सी पर बैठा हुआ वह पुरुष अपने सामने किसी को कुर्सी पर बैठा हुआ देखता है! सामने दीवार पर काँच लगा था। उसमे उसका प्रतिबिम्ब पडता था। पीछे से आवाज आती है 'मुलाकात हुई ? जो आदमी तुम्हे तुम्हारे सामने बैठा दिखाई देता है, वह ही तुम्हारी सहायता करेगा !'

वह आदमी इधर-उधर देखने लगा ...फिर आवाज आई। 'तुम इधर-उधर मत देखो, अपने सामने निरन्तर देखते रहो। यही वह आदमी है जो तुम्हारी सहायता कर सकता है। जब तक तुम स्वय अपनी सहायता करने को तत्पर नही होगे तब तक कोई भी तुम्हारी सहायता नही कर सकता, तुम हताश क्यो होते हो ? तुम्हारे पास बहुत धन है तुम जानते हो ? खैर, तुम्हारी नाक विक्रय करोगे ? एक हजार डालर मिलेंगे ?'

'क्या नाक भी इस तरह बेची जा सकती है?' वह अमेरिकन बोला।

'तो फिर हजार डालर से अधिक मूल्य की तो तुम्हारे

पास नाक ही ह न ? तुम ये कान वेच सक्ते हो ? मूल्य स्वरुप दो-तीन हजार डालर मिल जायगे।' आवाज आयी।

'कसी वात करते हो ? कान भी कोई विक्रय योग्य वस्त ह ?'

'तो फिर आप अपने ये नेत्र ही द दो न ? पाच लाख डाल्र मिल सक्ते ह !'

'अरे ? जीत-जीते क्ही आखे भी दी जा सक्ती ह ?'

'तो फिर भले आदमी, पाच दस लाख डालर से भी अधिक मूल्य की चीजे आपके पास ह। आपके पास कितने वहुमूल्य अवयव है ? इनके स्वामी होते हुए भी तुम निराश होते हो ? जरा स्वस्थ हो काम म लग जाओ।'

वह स्वस्थ हुआ। उससे उसे मानसिक चत य प्राप्त हुआ, मन प्रसन हुआ। वह स्वस्थ हाकर नपालियन का आभार मानता हुआ विदा हुआ।

जीवन जीने की दृष्टि प्राप्त करें

एक मनावनानिक (साइकालाजिस्ट) न मरने वाले उस व्यक्ति से पूछा कि 'क्या तुम्ह जीवन यापन की कला प्राप्त हुई ?' जीवन व्यथ गँवान योग्य नहीं ह। ऐसा नहीं है कि हम रद्दी कपड के साथ जसा व्यवहार करत हैं वसा व्यवहार इस जीवन के साथ भी कर। जिनके पास जीवन-यापन की दृष्टि है वे मानसिक रुप से स्वस्थ रहकर जीवन व्यतीन कर सकते हैं। उन्ही का जीवन-यापन का अपूव आनद प्राप्त हो सकता ह।

आज मनुष्य के पास भौतिक साधन प्राचीनकाल की अपेक्षा आवश्यकता से अधिक है। लेकिन उनके पास जीवन यापन की दृष्टि नही है। भारत के प्राचीन ग्रन्थो से जीवनयापन की दृष्टि प्राप्त होती है। उनमें रामायण एक ऐसा ग्र थ है, जिसके अनेक पात्रो की जीवन जोने को दृष्टि अमूल्य है। यदि चिन्तन मनन और परिशीलन से रामायण का अध्ययन किया जाय तो पाच पचीस पात्रो के माध्यम से जीवन जीने की दृष्टि प्राप्त हो सकती है। कोई भी ऐसा दु ख नही है जो उन पात्रो ने न भोगा हो। अनेक प्रकार की समस्याओ और उलझनो से ये पात्र सदैव जूझे है। किसी का पतन हुआ है तो किसी का उत्थान हुआ है, किसी का विनाश हुआ है, तो किसी का विकास हुआ है। कैसे पतन हुआ ? कैसे उत्थान हुआ ? इस दृष्टि मे इन पात्रो को पहचान कर और समझकर जो अन्तर दृष्टि प्राप्त होती है, उससे मनुष्य अपने स्वय के उत्थान की दृष्टि प्राप्त कर सकता है।

अत जीवन व्यतीत करने के लिये दिव्य दृष्टि की आवश्यकता होती है। और ऐसी दृष्टि प्राप्त होने पर आनन्द का अनुभव किया जा सकता है। जीवन को सफल बनाया जा सकता है। बताइए, कैसा जीवन व्यतीत करना चाहते हो ? दिव्य दृष्टि से यापन करना चाहते हो या जन्म मिला इसलिए जैसे तैसे जीना चाहते हो ? यो जीवन का आनन्द प्राप्त नही हो सकता।

भारत में जन्म लेना एक भूल !

एक भाई मिलने के लिये आये। बंबई मे रहते थे। १७ वर्ष पुरानी बात है। उन्होने कहा, 'महाराज' कुछ निवेदनकरु ।'

वे मेरे ससारी अवस्था के समय से परिचित थे। इसलिए मैंने पूछा "क्या भाई आप धर्म की आराधना करते हो या नही ?"

उन्होने उत्तर दिया 'महाराज, आपके पास तो बस धर्म के अतिरिक्त अन्य बात ही नही।'

मैने कहा—"भाई, जो आदमी जिस वस्तु की दुकान लगाकर बैठा हो, वह उस दूकान मे सग्रहित माल के अतिरिक्त दूसरे की बात क्यो करेगा ?'

नही नही महाराज, इस भारत मे मेरा जन्म होना गलत हो गया। अपना भी कोई जीवन है ? कितने बधन हैं ? जन्म के पश्चात् माता पिता का बधन तदुपरान्त शिक्षक का बधन, पत्नी परिवार बालको का बधन बस बधन, ही बधन।'

मैने कहा "भाई तुमने जिस जीवन की रट लगा रखी है, वैसा जीवन तो पश्चिम मे कुत्ते भोगते है वैसा तो मनुष्य भी नही भोग सकते। रानी एलिजाबेथ का कुत्ता 'रानी के महल मे खेल कूद सकता है और रानी की गोद मे भी मानव होकर यदि पशुओ के समान स्वच्छन्दता चाहिये तो निश्चित रूप से भारत मे जन्म होने की भूल हुई है। और क्या कहू ?

धर्म के विधि निषेधो से उनको घृणा थी, परन्तु धर्म के बिना क्या किसी का भी चल सकता है ? हा धर्म के विभिन्न अग होते हैं। किसी को कोई अग प्रिय होता है, किसी को कोई।

धर्म सबको प्रिय है:

क्या दुनिया मे कोई ऐसा मनुष्य हो सकता है, जो यह कहे कि 'मेरे घर मे कोई आकर चोरी कर जाय तो मुझे दु ख नही होगा' ? किसी को झूठ पसन्द नही, चोरी पसन्द नही, दुराचार पसन्द नही ....दूसरे सभी सदाचारी बन रहे तो अच्छा लगता है न ?

तुमको क्या अच्छा लगता है ? क्या तुम पर कोई क्रोध करे तो तुम्हे अच्छा लगेगा ? तुम्हारे साथ मायाचारी करे तो अच्छा लगेगा ? नही । क्योकि यह पाप है, इसलिए अच्छा नही लगता । कोई यह कहे 'साहब क्षमा करना' तो यह अच्छा लगेगा कि नही ? लगेगा । क्योकि क्षमा करना धर्म है । आपका परिवार नम्र रहे तो आपको अच्छा लगेगा कि नही ? क्योकि नम्रता धर्म है ।

वैसे दूसरे लोभ न करे, उदारता से आपके साथ व्यवहार करे, तो आपको अच्छा लगेगा कि नही ? इसका अर्थ यह है कि मनुष्य को धर्म प्रिय लगता है । दूसरो से वह धर्माचरण की ही कामना करता है ।

धर्म का अर्थ :

धर्म का क्या अर्थ होता है । धर्म की व्याख्या व्यापक रूप से समझे । अहिसा, सत्य, अचौर्य, सदाचार, अपरिग्रह, क्षमा नम्रता, सरलता निर्लोभता, प्रामाणिकता आदि धर्म है । धार्मिक क्रियाओ मे ही समस्त धर्म समाप्त नही हो जाता । धर्म के मूल तत्वो की ओर दृष्टि करना चाहिये । धार्मिक क्रियाएँ अहिसा

आदि धर्म की ओर जाने के मात्र साधन है, साध्य नही। लेकिन धर्म को अपने जीवन मे कौन स्थान दे सकता है? केवल सत्त्वशील प्राणी ही जीवन मे धर्म को उतार सकता है।

सिंहनी का दूध

धर्म तो सिंहनी का दूध है। सिंहनी का दूध अन्य बर्तन मे नही टिक सकता, केवल सोने के बर्तन मे ही टिक सकता है। देहरादून मे एक पडितजी वन अधिकारी थे। एक बार वे दौरे पर गए। उनका पुत्र देहली मे अध्ययन करता था, वह वहा अवकाश मे आया हुआ था। अफ्सर का पुत्र अर्थात् अफसर! अरे, अफसरो के लडके तो उनसे भी अधिक बढ कर होते है। उस लडके को अत्यधिक अभिमान था। जिसके कारण वह बडो के साथ भी उद्दण्डता का व्यवहार करता था। एक बार उसने नौकरो से कहा कि उसे सिंह देखना है। नौकरो ने कहा 'हा साहब, चलिए, आपको सिंह दिखाते हैं।' हाथ मे लकडी लेकर वे सभी सिंह देखने चल पडे। एक आधा मील यात्रा के पश्चात् एक झाडी आई। वही भयकर दुर्गंध का आभास हुआ। नौकर बोले 'साहब, आप यही ठहरिए। यही कही आस पास सिंहनी है। इतनी ही देर मे सिंहनी सामने आ गई। सामने ही सिंहनी के बच्चे थे, बच्चो को स्तनपान कराने के लिये सिंहनी तत्परता मे आई। उसकी दृष्टि बच्चो पर थी। जब अफसर के पुत्र की दृष्टि उन पर पड़ी तो वह कापने लगा। हाथ से लकडी छूट गई। सिंहनी तो अदृश्य हो गई। वहा गिरा हुआ दूध पत्तो पर जम गया था। अफसर के पुत्र ने कहा-'यह सिंहनी का दूध अत्यधिक पुष्टि-कारक (टानिक) है। दूध के पापड पत्तो पर से उतार कर वह घर लाया। दूसरे दिन प्रभात मे, दूध मे एक

टुकड़ा इस सिहनी के दूध का डाला और हिलाकर पी गया। दूसरे दिन भी पीया और तीसरे दिन भी पीया............ तीन दिन मे तो उसका शरीर लाल सुर्ख हो गया। सिहनी की भाँति 'मरु-मारु"' ऐसी हिसक वृत्ति उछलने लगी। जैसे सिंह शिकार को ढूढा करता है वैसे ही भाई साहव भी शिकार की खोज करने लगे। नौकर हाथ लग जाये तो उसी को मारने लगे। एक बार वह दफ्तर मे अधिक कागजो को इधर उधर बिखेरने लगा तो साहव के सचिव (सेक्रेट्री) ने प्रतिवेदन कर कहा,-'साहव, कागजो को मत बिखेरा करो' इतनी सी बात पर उसने सेक्रेट्री को ऐसा तमाचा मारा की उसका गाल सूज गया। उसके पिताजी आए और सेक्रेट्री से पूछा कि "क्या बात है ?"

'कुंवर साहव ने मारा।'

अफसर-पिता ने देखा कि पुत्र के शरीर का रूप परिवर्तन हो गया है। उन्होने नौकरो से पूछा तो ज्ञात हुआ कि लडका सिहनी के दूध को गाय के दूध मे मिलाकर पीता है, उसी का यह प्रभाव है। उन्होने उसे देहली भेजकर चिकित्सा करवायी। फलस्वरूप उसके शरीर की कृत्रिम ललाई चली गई और वह स्वस्थ हो गया। धर्म भी सिहनी के दूध के समान प्रभाव-शाली है। जिसको हर कोई नही पचा सकता। सत्त्व चाहिये। सत्त्वहीन प्राणी धर्म का पालन नही कर सकता।

धर्म का प्रारम्भ कहां से ?:

धर्म का प्रारम्भ सदैव हृदय की कोमलता से और मृदुता से होता है। समस्त गुण विनय के आधीन है, एव विनय हृदय

की मृदुता के आधीन है। जो मनुष्य हृदय की मृदुता को अखण्ड रख सकता है वही सत्त्वशील प्राणी है। सत्त्व के ही आधार पर गुणों की वृद्धि की जा सकती है।

कैकयी की समस्या

जिस समय महाराजा दशरथ ने रामचन्द्रजी को बुलाकर सूचित किया कि 'हे पुत्र! तुम्हारी मां कैकयी भरत के लिये राज्य मांगती है।' उस समय भरत को राज्य मिलना अनिवार्य हो जाता है और रामचन्द्रजी का राज्याभिषेक स्थगित हो जाता है। राजा दशरथ आत्म-साधना के लिये तत्पर हो गये थे। चारित्र जीवन ही उनकी आत्मा का लक्ष था। इससे कैकयी की परिस्थिति विकट हो गयी थी। महाराजा दशरथ ने जब अपना मन्तव्य परिवार के समक्ष प्रकट किया तब भरत ने तुरन्त कहा कि 'पिताजी, यदि आप त्याग के मार्ग पर जाओगे तो मैं भी त्याग के मार्ग पर जाऊंगा।'

कैकयी सोचती है 'यदि पति त्याग के मार्ग पर अग्रसर हो और पुत्र भी, तो मेरे जीवन में शेष क्या रह जाता है? कैकयी को यह समस्या व्याकुल करने लगी। कैकयी के जीवन की यही समस्या रामायण का मूल है। इस समस्या के उत्पन्न होने का प्रमुख कारण कैकयी के अन्तराल में छिपी मानव की स्वाभाविक मनोकामना थी। स्त्री के जीवन में सुख मिलना हो तो वह पति के द्वारा या पुत्र के द्वारा प्राप्त होता है। दोनों तरफ से ही यदि सुख प्राप्त न हो तो स्त्री को अपना जीवन आनंदरहित लगता है। विवाह के पश्चात् कैकयी को दशरथ का अपार प्रेम प्राप्त हुआ था। अब दशरथ त्याग के पथ पर अग्रसर हो रहे

है … …भरत भी उनके साथ त्याग पथ पर जाने को कह रहा है … …यही प्रश्न कैकयी को वारम्वार व्यग करता है ।

सुख भोगने की आदत खतरनाक :

दीर्घ समय तक भोगे हुए सुख की आदत तुम्हारे लिये दु ख रूप बनती है । सुख भोगने की आदत अत्यन्त खराब है। सुख भोगने की आदत मत पड़ने दो । चाहे वह सुख किसी भी प्रकार का क्यो न हो । रूप, रस,गध, स्पर्श, शव्द इनमे से किसी भी विपय का सुख हो, आदत हानि कारक है ।

जिसे मीठे शव्द सुनने की आदत पड़ गयी, उसे यदि कड़वे शव्द सुनने पडे तो उनकी वेदना असह्य हो उठती है। यदि किसी को सुन्दर रुप देखने की आदत पड़ जाय, और फिर उसे सुन्दर रुप देखने को न मिले तो भयकर दु ख होता है। मीठा, तीखा और खट्टा रस उपभोग करने की आदत पड़ जाने के उपरान्त फिर वैसा रस न मिले तो कैसी मानसिक वेदना होगी ? सुगन्धित पदार्थो के उपभोग की आदत के उपरान्त यदि ये पदार्थ न मिले तो तीव्र व्याकुलता होती है । मुलायम चमडी का सुख भोगने वालो को यदि उसके उपभोग से वचित रखा जाये तो उन्हे कैसी वैचेनी होती है ? मीठे शव्द, सुन्दर रुप, मधुर रस, मादक गध और मुलायम स्पर्श आदि की जिसे आदत पड गई उसे इन पदार्थों के न मिलने पर अत्यन्त दु ख होता है ।

कैकयी ने सोचा कि 'मेरा क्या होगा ? स्वामी तो जायेगे ही, पुत्र भी चला जायेगा . . .' कैकयी महाराजा दशरथ की प्रेमपात्र रानी थी । कैकयी युद्ध मे रथ चलाने मे निपुण थी ।

कैकयी को महाराजा दशरथ का वियोग एक पल भी सहन नहीं था। इसलिये जब से दशरथ ने संन्यास लेने का निर्णय लिया तब ही से कैकयी का असह्य दुःख प्रारम्भ हो गया था।

दशरथ का जीवन यापन का दृष्टिकोण ही अद्भुत था। इनके त्याग के संकल्प के पीछे एक दृष्टिकोण यह भी हो सकता है कि पुत्र राज्य का कार्यभार सौंप जाने लायक हो गये अतः अब राजगद्दी रिक्त करनी चाहिये। सिंहासन के रिक्त न रहने पर जवान पुत्रों मे विद्रोह उत्पन्न हो जाता है। इतिहास मे ऐसे बहुत से दृष्टान्त वर्णित है। राजगद्दी के लिये पुत्र ने पिता की हत्या कर दी है। भगवान महावीर स्वामी के समय महाराजा श्रेणिक ने यही बात विस्मृत कर दी थी न? परिणामतः राजगद्दी रिक्त न करने पर कुणिक ने विद्रोह किया था न?

दशरथ की ज्ञानदृष्टि

दशरथ का दृष्टिकोण अत्यन्त महत्वपूर्ण था। योग्य उम्र मे पदार्पण करने वाले पुत्रों के साथ उचित व्यवहार करना चाहिये।' नीति शास्त्र मे कहा है 'सोलहवें वर्ष मे पुत्र को मित्र के समान समझना चाहिये।' वर्तमान मे यदि कहना हो तो दसवे वर्ष मे पुत्र को मित्र समझना चाहिये।" इसलिए तुम समझो एवं समझदार बनो। अपने दृष्टिकोण को बदलो। आँखे बन्द कर मत चलो। अपने मे परिवर्तन करो।

महाराज दशरथ भी अपने जीवन मे परिवर्तन का दृष्टिकोण अपनाते है कि 'निवृत्ति के मार्ग पर चलो। भारतीय संस्कृति मे चार आश्रमों की व्यवस्था है। सौ वर्ष की आयु के अनुसार यह व्यवस्था प्राचीन ग्रन्थों मे मिलती है। परन्तु ८०

वर्ष के अनुसार गिने तो भी आपको ४० वर्ष की आयु मे ही निवृत्त हो जाना चाहिए न ? अधिक से अधिक ६० वर्ष की आयु मे तो ससार का परित्याग कर चारित्र जीवन का आरम्भ कर देना चाहिए। कहिए, कैसे निवृत होगे ? ससार मे रहकर निवृत्ति धारण करना है ? आपकी सन्तान घर सम्भालने, अपने उत्तरदायित्वो का निर्वाह करने योग्य होने के पश्चात् यदि आपसे कहे कि 'पिताजी, अव आप अपने धर्म का आराधन करिये' .... तो ऐसी सन्तान आपको अच्छी लगेगी ? आप कहेगे 'वस-वस अभी तो तुम्हे अनुभव प्राप्त करना है।' लेकिन आप समझ ले कि जिसे आपके अनुभव की आकॉक्षा नही, यदि उसे आप अपना अनुभव जवरदस्ती देगे तो इसका परिणाम उल्टा ही होगा। क्योकि अनुभव देने की वस्तु नही, प्राप्त करने की वस्तु है।

रामचन्द्रजी के राज्याभिषेक के पीछे भी जीवन जीने की अनेक दृष्टियॉ थी। दशरथ ने विचार किया 'राम योग्य उम्र को प्राप्त हो चुके है अत राजगद्दी राम को सौपकर मै मेरे परम कर्त्तव्य का पालन करुँ। अपनी आत्मा को इस प्रकार महात्मा वनाकर . परमात्मा पद प्राप्त करुँ।' यह आत्मा जव तक महात्मा न वन जाय तव तक कोई भी परमात्म-स्वरूप प्राप्त नही कर सकता। महात्मा तो वनना ही पडेगा। ससार के सुखो का त्याग, ससार की समस्त कामनाओ और वासनाओ का त्याग किये विना कोई भी आत्मा महात्मा नही वन सकती। इसके लिये अन्तरात्मा वनना पडता है। जिससे सहज ही आत्मनिरीक्षण हो सकता है और आत्मा का उत्थान होता है।

दशरथ ने विचार किया कि 'मैंने अपना कर्त्तव्य पूर्ण किया, प्रजा के कल्याण करने का उत्तरदायित्व अब राम ही निभायेगा।' बताइए आपको जीवन के अन्तिम श्वास तक भोगों मे ही लिप्त रहना है या त्याग की श्वासोच्छवास लेते लेते परलोक पधारना है ? सरकार ५८ वें वर्ष मे नौकरों को पदच्युत कर देती हैं। तो आप भोग सुखों से कब निवृत्त होंगे ?

ज्ञान पूर्ण दृष्टि के अभाव मे,मानव जीवन और पशु जीवन मे भेद नही रहता। क्या आप जीवन की दिव्य दृष्टि प्राप्त नही कर सकते ? क्या आप मे समझ नहीं है ? बुद्धि नहीं है ? समझ और बुद्धि का सदुपयोग करें।

अपने जीवन के वर्षों का विभाजन करो कि 'इस प्रकार मुझे जीवन व्यतीत करना है। इन त्याग की कक्षाओं मे पहुचना है।' आप चाहे "हनुमान छलांग" न लगा सके, लेकिन सीढी दर सीढी तो चढ सकते हैं न ? इसका भी क्रम होता है। जीवन यापन का व्यवस्थित क्रम बनाना चाहिए। जिससे आत्मा की उन्नति हो और आत्मानन्द प्राप्त हो। आप ज्यो ज्यों आगे बढते जाओगे त्यो त्यो आत्मा का विशुद्धिकरण होगा और आन्तरिक आनन्द का अनुभव प्राप्त होगा।

स्नेह के सुख की प्रवृत्ति

इसी तरह का जीवन दशरथ का था इसलिए उन्होंने त्याग के मार्ग का प्रस्ताव किया। भरत ने उनसे कहा 'यदि आप त्याग के मार्ग पर जाते हैं तो मैं भी त्याग के मार्ग पर ही जाऊगा।'

भरत ने त्याग के मार्ग पर जाने के लिये जब कहा तब कैकयी के सामने बडी समस्या खडी हुई 'स्नेह रहित जीवन ? पति का स्नेह नही, पुत्र का स्नेह नही ..... मैं किस तरह जी सकू गी ?, इस तरह सुख उपभोग की प्रवृत्ति असह्य दु ख-दायी बन जाती है। स्नेही जनों के स्नेह के मध्य में ही जीवन यापन की आदत ....कैकयी को बहुत व्यथित कर देती है।...... ..स्नेह का भी एक सुख है। जो जीव को बहुत प्रिय है ...... जब यह प्राप्त हो तभी इसका कुछ समय के लिये त्याग कर जीने का प्रयत्न निरन्तर करना चाहिए । इसके लिये जैन धर्म के क्रिया मार्ग मे 'पौषध व्रत' का वर्णन किया गया है। २४ घन्टे स्नेही जनों से विरक्त रहने का व्रत। साथ ही भोजन का सुख, अब्रह्म का सुख, धन सम्पत्ति कमाने का सुख, इत्यादि सुखो की भी आदत न पडने देना चाहिए। इसलिए तपश्चर्या, ब्रह्मचर्य, दान आदि करते रहो। जिससे कि सुख भोगने की प्रवृत्ति न बन जाये। सुख के बिना भी प्रसन्नता पूर्वक जी सकने की शक्ति प्राप्त कर सकते हो। पर्व तिथियो के महत्त्व को इस दृष्टि से विचार किया जाय तो इन पवित्र दिनो में पवित्र बनने के पुरुषार्थ का निर्वाह कर सकोगे ।

रामायण रचने का उद्देश्य :

एक परिचित भाई मिले । मैंने पूछा, क्यो भाई क्या करते हो ?"

'साहब, धर्म कैसे हो? व्यापारिक यात्रा जो करनी पडती है।"

'अच्छा, खान पान मे तो ध्यान रखते हो न ?"

'अरे साहब, सब करना पडता है, सब खाना पडता है।'

'सब कुछ क्या खाना पडता है ? अमुक पदार्थ खाए विना क्या नही चल सकता ? हम भी यात्रा करने वाले है, हम तो चला लेते हैं। हम हमारा सत्त्व ऐसा क्यो नही बना सकते कि 'हम यह चीज नही खाए। चातुर्मास मे सभी सयम उपवास करने हेतु कहते है। श्रावण का महिना पवित्र मास कहलाता है। पहले परिचित भाई की अमुक वस्तु खाने की प्रवृत्ति हो गई थी। यात्रा करना तो बहाना था।

सुख भोगने की आदत मत पडने दो। सुख-उपभोग की प्रवृत्ति पर ही तो रामायण की रचना हुई है। तुम्हारे घरो मे भी किसी समय 'रामायण' होती है न ? आप तुरन्त सूचित करते हो कि हमारे यहा आज 'रामायण' हुई ! रामायण क्या शुरु होती है ! कभी विचार किया ? सुख भोगने की आदत के कारण। यदि इससे मुक्त हो जाओ तो कोई 'रामायण' शुरु ही नही करेगा।

कैकेयी ने विचार किया–'पुत्र और पति के स्नेह से वंचित जीवन कैसे व्यतीत होगा ? मुझे पति के मार्ग मे व्यवधान नही डालना चाहिए। लेकिन भरत को तो वैराग्य के मार्ग पर नही जाने देना चाहिए। मुझे पति का स्नेह तो अत्यधिक प्राप्त हो चुका है। उनके मार्ग मे बाधाएँ उत्पन्न नही करना है। वह भले ही आत्मसाधना करे। कैकेयी इस भाति विचार करती है।

कैकेयी भरत के लिये राज्य मागती है

लेकिन भरत को कैसे समझाया जाय ? भरत नवयुवक हैं। बहुत सोच समझ कर उसने त्याग के मार्ग पर चलने का

निश्चय किया है। भरतजी पहले ही वैरागी थे। उन्हें तो जन्म मे ही वैराग्य था। जिस समय पिता ने त्यागमार्ग को अपनाने का प्रस्ताव किया, भरत ने भी उसी समय त्याग के मार्ग पर जाने को कहा। कैकेयी विचक्षण थी। उसने विचार किया कि भरत पिता की आज्ञा का पालन निष्ठापूर्वक ही करता है। इसलिए यदि उसके पिता उसे आज्ञा दे कि वह ससार मे ही रह कर अपने कर्त्तव्यो को निभाए तो सभी कुछ सम्भव है।' कैकेयी वुद्धिमती थीं। आपको पता है न कि कैकेयी का विवाह स्वयम्वर द्वारा हुआ था। जिस समय कैकेयी ने दशरथ को वरमाला अर्पित की थी उसी समय अन्य राजा युद्ध हेतु तैयार हो गए और इसी युद्ध मे कैकैयी ने दशरथ के रथ के सारथी के रूप मे रथ का सचालन इस प्रकार किया था कि दशरथ ने समस्त राजाओं को परास्त कर दिया था। राजा कैकेयी पर अत्यधिक प्रसन्न हो गए थे। तब उन्होने कहा था 'जो मागना हो माग लो'। कैकेयी ने तत्काल कहा 'मेरे वरदान को भविष्यार्थ रख लोजिए समय आने पर माग लू गी।' ओर तब कई वर्ष पश्चात् जिस समय दशरथ इस ससार को त्याग रहे थे उस समय कैकेयी ने यह वचन मागा। कैकैयी ने उससमय निवेदन किया कि-मेरा अमानत वचन आज मागना चाहती हूँ।

दशरथ ने कहा-'माग लो जो मागना हो, मैं तो वचनबद्ध हूँ, लेकिन एक वात स्मरण रहे कि मेरे त्याग के मार्ग मे कोई विघ्न न आवे।'

कैकैयी-उत्तम. अच्छा आपको वात मान्य है। राज्य मेरे भरत को दिया जावे।

कैकेयी ने राम का वनवास नहीं मागाः–

रामायण मे घटनाओ का वर्णन भिन्न भिन्न तरह से वर्णित है पात्र तो एक ही हैं, लेकिन लेखकों का दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न है। भगवान महावीर स्वामी के पाच सौ वर्ष पश्चात् पउम-चरियम नामक ग्रन्थ लिखा गया। 'पदम चरित्र' मे पद्म का अर्थ राम है। पदम चरित्र अर्थात् राम चरित्र। उसके बाद कलिकालसर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य ने रामायण की रचना की। इनके द्वारा रचित रामायण मे ककेयी ने एक ही वचन मागा ऐसा उल्लेख हैं। राम को वनवास दिया जावे' यह माग ककेयी ने कभी नही की थी। महाराजा दशरथ ने कैकयी को उनकी माग का वचन दिया, लेकिन यह कहा कि 'अच्छा, राम को तो पूछ लू, हालांकि मुझे पूर्ण विश्वास है कि राम से बिना पूछे भी यदि मैं राज्य दे दू तो भी मेरा राम ना नही करेगा उन्होंने राम को बुलाकर कहा–'तुम्हारी माता ने स्वयवर के समय का शेष वरदान आज माग लिया है मैंने वह वचन स्वय ही दिया है। तुम्हारी माता ने भरत को राज्य सौपे जाने के वरदान की माग की है।' तत्क्षण ही रामचन्द्रजी के मुख पर उदासी छा गई। विचार कीजिए कि यह उदासीनता किस बात की थी ?

राम ने पिताजी के चरण छू कर कहा–'आप राज्य के स्वामी हैं। राज्य भरत को सौंप सकते हैं लेकिन आपने राम से क्यो पूछा ?' कही राम पर आपका विश्वास कम तो नही हो गया ? इसी विचार के कारण राम के मुख पर उदासीनता छा गई थी। यह पूछने की इच्छा पिताजी को क्यो हुई ? क्योकि उनका विश्वास घट गया गया है इसलिये ?' राम ने कहा–यदि

भाई भरत को राज्य सौंपा जाना है तो इससे मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है, क्योंकि भरत तो मुझे प्राणो से भी अधिक प्रिय है।'

जिस पर अत्यधिक प्रेम होता है उसे अपने अधिकार की वस्तु प्राप्त हो तो उससे प्रसन्नता का कोई पारावार नही होता। यदि आपका उसके प्रति वास्तविक प्रेम है तो उसे आपके अधिकार की वस्तु की प्राप्ति होने पर आप अवश्य प्रसन्न होगे।

'राम ने कहा— बहुत उत्तम।'

भरत को जब पिताजी के द्वारा राज्य सौंपे जाने की ओर श्रीराम द्वारा सहमति दी जाने की सूचना मिली तो वह दौडते हुए आये और पिताजी के चरणो मे गिर गये—कहने लगे, 'मुझे क्षमा करिए, मैंने तो आपके ही मार्ग पर चलने का सकल्प लिया है। मैं राज्य किसी भी सयोग मे लेने मे असमर्थ हूँ, राज्य तो बडे भाई को ही सौंपा जाता है। मै तो त्याग के मार्ग पर ही चलू गा।'

राम मौन रहते है। दशरथ इधर उधर देखते है। वे किंकर्तव्य-विमूढ बन गए। वे मौन है। श्रीराम ही निवेदन करते है 'भरत, पिताजी की आज्ञा तुम्हे शिरोधार्य करनी होगी। राज्य तुम्हे ही सभालना है।' भरतजी हाथ जोडकर विनयपूर्वक रामको निवेदन करते है, मैं किसी भी अवस्था मे राज्य भार नही सभाल सकता। मै एक क्षण भी इस ससार मे नही रह सकता हूँ। पिताजी के साथ ही त्याग के मार्ग पर जाऊ गा।' राम ने भरतजी को बहुत समझाया, लेकिन भरत ने एक भी बात मान्य नही की। राम ने सोचा कि—'जब तक मै अयोध्या मे रहता

द्वितीय प्रवचन

उत्पत्ति-स्थिति-लय

उत्पत्ति, स्थिति और लय-यह विश्व का एक शाश्वत क्रम है। उत्पन्न होना, स्थिर रहना और नष्ट हो जाना, यही इस विश्व का अपरिवर्तनीय क्रम है, अर्थात् इस क्रम को कोई भग नही कर सकता, बदल नही सकता, परिवर्तन नही कर सकता। विश्व के पाच द्रव्यो मे से कोई भी द्रव्य हो, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, अथवा पुद्गलास्तिकाय-उत्पत्ति, स्थिति और लय-इन तीनो का क्रम प्रत्येक द्रव्य के साथ जुडा हुआ है, लेकिन विश्व मे जीव द्रव्य के अतिरिक्त अन्य द्रव्यो मे उत्पत्ति, स्थिति और व्यय का क्रम किस तरह चलता है, यह वर्तमान मे विचारणीय नही है, अपितु, यह क्रम जीवो के जीवन का किस प्रकार स्पर्श करता है, यह देखना है।

स्वर्गवासी का क्या अर्थ है ?

हम उत्पन्न हुए हैं, इसका अथ यह है कि हमारा जीवन उत्पन्न होता है, आत्मा ता उत्पन्न नही होती। आत्मा अनादि है, लेकिन उस अनादि आत्मा के भिन्न-भिन्न जीवन की आदि है। अपना जन्म हुआ, इसका अर्थ है हम उत्पन्न हुए, हम जीवित है-यह स्थिति है। एक दिन ऐसा भी आयगा कि जब लोग यह कहगे कि 'वे मर गए'-यह व्यय है। मनुष्य जब मृत्यु को प्राप्त होता है तो कहते है कि देव लोक गए' अथवा स्वगवासी हो गये लेकिन क्या तुम जानते हो अथवा ज्ञान होता है कि व स्वर्ग गए हैं ? यथार्थ मे जीवन के व्यवहार मे अद्भुत दृष्टिकाण रहा है। जीव मर कर चाहे कही भी गया हा, लेकिन आपका उसके प्रति दृष्टिकोण कितना सुन्दर है ? वे स्वगवासी हुए। जब वह जीवित था तब आप कहते थे कि 'नरक मे जा' लेकिन मरने के बाद दृष्टिकोण बदल गया। मरने के पश्चात् आप मरने वाले क प्रति जैसा दृष्टिकाण रखते ह वसा ही यदि उसके जीवित रहन पर रखे तो ?

क्या आप जानते हैं कि स्वग मे जाने वाली आत्मा कसी होना चाहिए ? ऐसी आत्मा के लक्षण जानते ह क्या ? नरक मे जाने वाले क, तियच यानि मे उत्पन होने वाले के अथवा पुन मनुष्य हान वाले के लक्षण जानत हैं ? नही, तो यह आश्चय की बात कही जायगी ? आप कौनसा लक्ष्य लेकर जीवित ह ? जब तक यह निणय न हा जाए तब तक यह जीवन किस तरह व्यतीत करना है ? पहले यह निणय हाना चाहिये कि आपको मर कर कहा जाना है। आधार पर कसा जीवन व्यतीत करना चाहिए इसका [illegible] या जा सकता है।

मर कर कहां जाना है ? इसका निश्चय करें:

पहले एक निर्णय करले कि 'हमे मर कर अमुक गति मे जाना है।' यह तो निश्चित समझते हो कि मरना तो है ? क्या आप यह मानते है कि मरने के पश्चात् अमुक गति मे जन्म लेना ही पडेगा ? इसमे क्या सदेह है ? नही ? सन्देह हो तो पहले उसे दूर कर दे। मैं मानता हू कि इस सम्बन्ध मे यहा उपस्थित लोगो मे तो किसी भी प्रकार की शका नही है। अस्तु, यह निर्णय श्रद्धा पूर्वक किया गया है कि बुद्धि पूर्वक ?

क्या आपको मरना नही है ? अगर आपको मरना नहीं है तो फिर घर वाले भगवान से क्या मागते है ! जानते हो ? लेकिन आपका मरण निश्चित ही है, इसका घर वालो को पक्का विश्वास है। इसलिये वे कहते है 'सौ वर्ष जीयो।' यदि उन्हे यह ज्ञान हो जाय कि आप अमर है तो फिर वे आपके लिये क्या चाहते, कभी आपने विचार किया है ?

पुनर्जन्म का सिद्धान्त तर्क द्वारा समझो:-

मरना है, मौत है, पुन जन्म लेना है यह श्रद्धा से स्वीकार करते हो। इस बात को बुद्धि से अच्छी तरह समझने का प्रयत्न करिये। यदि ऐसा नही तो सभवत श्रद्धा के आधार पर तो इस मान्यता पर दृढ रहोगे किन्तु यह बात दूसरो को समझा नही सकोगे और समझा नही सके तो बडी कठिनाई है।

यदि परिवार के सदस्यो को आप आत्मा के सबध मे, स्वर्ग और नरक के सम्बन्ध मे, पुण्य और पाप के सम्बन्ध मे

यदि विवेक की भूमिका पर न ममना सके तो परिवार को ज्ञानवान श्रद्धावान और चारित्रवान नहीं बना सकते।

एक बार मैं मन्दार चिन्त विद्यालय मे व्याख्यान देने गया। व्याख्यान सम्पूर्ण हुआ। व्याख्यान के पश्चात् दो एक छात्र मेरे पास आए। व्याख्यान मे उन्होंने 'स्वर्ग और नरक' ऐसे शब्द सुने थे। इसलिए मेरे पास आकर उन्होंने मुझ से सीधा यह प्रश्न किया 'महाराजश्री आपने स्वर्ग और नरक के सम्बन्ध मे जो वक्तव्य किया वह कल्पना से भिन्न है? स्वर्ग और नरक तो मात्र कल्पना है इससे क्या वे भिन्न हैं? वह कोई (Proper Place) निश्चित स्थान है?, ये विद्यार्थी गुजरात बाहर के निवासी थे। उन्होंने कहा, स्वर्ग और नरक' ये शब्द ही है। अथवा स्वर्ग नरक जैसा कोई विशेष स्थान है जहा जीवों का रहना पडता है?

मैने पूछा 'आपने यह प्रश्न कैसे किया? आपने भारत मे जन्म लिया है। क्या भारत जैसे महान् धार्मिक देश मे स्वर्ग और नरक सम्बन्धी प्रश्न कोई कर सकता है?

उन्होंने कहा 'साहब, हमको ज्ञात है कि स्वर्ग और नरक कुछ नहीं मात्र कल्पना है। अच्छा विचार करें वह स्वर्ग और बुरा करे वह नरक।'

यदि स्वर्ग और नरक कहीं नहीं है तो फिर पुण्य और पाप का भेद क्या? स्वर्गप्राप्ति नहीं तो पुण्य क्यो करना? यदि नरक मे नहीं जाना पडता तो पाप से क्यो डरे? पुण्य और पाप नहीं तो धर्म किसलिए? बस Eat, Drink and be merry

खाओ पीओ और मौज उड़ाओ ! धर्म के विधि और निषेध में क्यों बंधे हो यह खाऊँ कि नहीं खाऊँ ? यह पीऊँ या नहीं पीऊँ ? यह सब, किसलिये ? धर्म में वर्णित है कि यह खाने योग्य नहीं, यह पीने योग्य नहीं, यह करने योग्य नहीं है और यह करने योग्य . . . . . ऐसा कहकर अपने को डराया गया है। भय बनाकर कहा कि, 'ऐसा करोगे तो पुण्य होगा, पुण्य करोगे तो स्वर्ग मे जाओगे, पाप करोगे तो नरक में जाओगे'। ऐसा कहा जाता है। मनोविज्ञान के नाम से, तर्क के नाम से समझाया जाता है। कुतर्क और वितर्क के माध्यम से बालको को ठसाया जाता है।

मैंने पूछा 'क्या विश्व के शब्दकोष में कोई ऐसा शब्द भी है कि शब्द तो हो परन्तु वस्तु न हो ? उदाहरणार्थ 'मकान' शब्द है तो मकान नामक पदार्थ भी है। 'देह' यह शब्द है तो देह नाम का पदार्थ भी है। स्वर्ग शब्द है तो स्वर्ग जैसा कोई स्थान भी होना चाहिए। यदि पदार्थ का अस्तित्व ही न हो उसका कोई वाचक शब्द भी नही हो सकता।

आत्मा को प्रमाणित करने वाले तर्क:

इसी प्रकार आत्मा के संबंध मे भी निर्णय किया जा सकता है। 'आत्मा' यह शब्द है, इसलिए 'आत्मा' नामक तत्त्व भी होना ही चाहिए।

सर्वप्रथम पाश्चात्य दर्शन मे 'आत्मा' शब्द का प्रयोग डेकार्ट (पाश्चात्य दार्शनिक) ने किया। उन्होने आत्मा को सिद्ध करते हुए कहा 'I Thinkt Theretore I Exist' 'डेकार्ट

न आतमा न अनित्व मे शवा करने नाशो का मनारजक दृष्टान्त देकर मजाक उडाया है। यह दृष्टान्त इस तरह है एक आदमी था। उसने डाक्टर के पास जाकर कहा डाक्टर साहब, मुझे देखिये कि मैं मर गया हूँ या जीवित हूँ ? मुझे सन्देह है।'

डाक्टर आगन्तुक मरीज का क्या समझे ? पागल से कम तो नहीं समझे ? जो अपनी आत्मा के अस्तित्व मे शका करता है वह इस मनुष्य की तरह मूर्ख है। अपने अस्तित्व के विषय मे स्वय को ही शका ?

आप घर आते ही पत्नी से पूछें, घर में छोटा बच्चा या बच्ची है कि नहीं ?' यह तो ठीक है किन्तु यदि यह पूछें कि 'मैं हूँ कि नहीं ?' तो आपकी क्या दशा हो ?

डेकार्ट कहता है आप अपने अस्तित्व के विषय मे शका करते हैं ? मैं अर्थात् यह आत्मा। चूंकि मैं विचार कर सकता हूँ इसलिए मेरा अस्तित्व है।'

इस विश्व मे जितने असयुक्त शब्द हैं उन शब्दों के वाच्य पदार्थ भी है। उन पदार्थों का विश्व में अस्तित्व है। यदि 'स्वर्ग' शब्द है तो स्वर्ग का अस्तित्व भी है। 'नरक' शब्द है तो नरक का अस्तित्व भी होना है। विश्व में जो वस्तु नहीं तो उसका शब्द भी नहीं है। शब्द सयुक्त नहीं, असयुक्त चाहिए।

ग्रीक फिलासफर प्लेटो का 'रिपब्लिक' मे कथन है कि भारतीय संस्कृति में यदि कोई आकर्षक तत्व है तो वह 'परलोक' है। जो मनुष्य परलोक की बात नहीं मानता उसका कोई

नियम, कायदा, वाद दर्शन, कम्मा नही सुधार सकते। लेकिन जिस मनुष्य इसे यह विश्वास हो जाय कि मृत्यु पश्चात् पुन जन्म लेना है तो वह कोई कार्य करने से पहले विचार करेगा कि 'कहाँ जाना है ? वह उसका निर्णय करने के उपरान्त अपनी यात्रा प्रारम्भ करेगा। यात्रा करना है तो 'कहाँ पहुचना है ? किस तरह पहुचना है ? किस माध्यम से जाना है ?' इन समस्त बातो का निर्णय होना चाहिए, इनका निर्णय होने के पश्चात् जीवन यापन का आनन्द आयेगा, इसी लक्ष्य पूर्वक जीवन यापन कर सके।

चार गति:-

मृत्यु के पश्चात् कहाँ-कहाँ जाना पड़ता है ? मृत्यु के पश्चात् जीव चार गति मे जाते है।

१—*नरक*. जहाँ दुख ही दुख है, क्षण भर का भी सुख नही।

२—*तिर्यञ्च* पशु पक्षी की योनि जो प्रत्यक्ष हैं। कीडे से लेकर पञ्चेन्द्रिय तक है, जहाँ दुख अधिक हैं। सुख का प्रमाण बहुत कम है।

३—*मनुष्य* जहाँ सुख भी है, और दुःख भी है-तिर्यञ्च योनि की अपेक्षा सुख अधिक है।

४—*स्वर्ग* जहाँ भौतिक सुख अधिक है, दुख कम है। स्वर्ग अर्थात् अपने से विशिष्ट शक्ति वाले और लब्धि वाले जीवो का निवास स्थान।

नरक मे दुःख ही दुःख है। तिर्यञ्च योनि में अल्पाधिक दुःख, नाम मात्र के सुख। मनुष्य गति में दुःख अधिक और सुख कम। पशु योनि से मानव जीवन में सुख अधिक हैं। पशुओं की अपेक्षा कई दृष्टियों से मानव अधिक सुखी प्रतीत होता है।

पशुओं को जो पराधीनता का दुःख है, वह भयंकर दुःख है। मनुष्य तिर्यञ्च से अधिक स्वाधीन हैं। देवलोक में सुख अधिक, दुःख बहुत थोड़ा हैं।

अब आप निश्चय करें कि आपको चार गतियों में से किस गति में प्रवेश करना है ? कौनसी गति आपको पसन्द है ? आप ही बताइए फिर वहां जाने के लिये किस तरह का जीवन व्यतीत करना चाहिए, उसका दृष्टिकोण बताएँ।

मेरी इच्छा तो आपको नरक में भेजने की नहीं है। वहाँ नहीं जाने दूँ ऐसी भावना है। आप तिर्यञ्च योनि को पसन्द नही करते, ऐसा मैं मान लेता हूँ। मानव जीवन आप तब ही चाहेंगे जबकि वर्तमान जीवन सुखमय व्यतीत होता है। हां यदि आप वर्तमान दुःखी हो तो आप मानव जीवन भी नहीं चाहेंगे।

सभा —साहब यहां धर्म करते-करते यदि कोई अपूर्णता रह गई हो तो उसकी पूर्ति हेतु पुनः मानव जीवन की आवश्यकता का आभास होता है।

महाराज श्री क्या आप मानव जीवन में धर्म करने की आवश्यकता समझते हो ?

सभा जी हां, साहब।

महाराज श्री: ऐसा ? तब तो आप मानव जीवन का उपयोग धर्म की आराधना करने मे ही करते होगे ? जब तक जीवनयापन का दृष्टिकोण नही बदले तब तक सच्ची धर्म-आराधना नही कर सकते। परलोक का दृष्टिकोण अचूक हो जाना चाहिए। आप ऐसा दृष्टिकोण बना सकते है।

कहाँ जाना हैं ? कैसा जीवन है :

केवल निर्णय कर लेने मात्र से ही सद्गति प्राप्त नही होती, हाँ, उसके लिए बताए गए मार्ग पर चलो तो सद्गति प्राप्त होगी। देहली जाना है, और यदि मद्रास-एक्सप्रेस मे बैठ गए तो ? देहली पहुचोगे ? नही ! मद्रास पहुच जाओगे ! इसी प्रकार यदि स्वर्ग प्राप्त करना हो तो क्या हिसा, झूठ, चोरी आदि पाप के माध्यम से प्राप्त कर सकते है ? रौद्र ध्यान मे रमण करोगे तो कहाँ पहुचोगे ? दुर्गति मे पहुच जाओगे न ? आपको नरक अथवा तिर्यञ्च गति मे तो जाना नही है न ? यह निर्णय तो निश्चित है न ?

सभा: जी, हाँ यह निर्णय निश्चित है।

तो एक बात निश्चित हुई कि 'अपने को नरक योनि मे नही जाना, अपने को तिर्यञ्च योनि मे नही जाना। या तो मनुष्य गति प्राप्त करना है अथवा स्वर्ग।

रामायण का अध्ययन किस प्रकार करोगे ? :

मृत्यु के पश्चात् स्वर्गगमन करना हो, मृत्यु के बाद मनुष्य बनना हो, और मनुष्य बनकर, धर्म पुरुषार्थ कर निर्वाण प्राप्त करना हो तो यहाँ जैसा जीवन यापन करना चाहिए इसी

दृष्टिकोण के साथ यदि रामायण का अध्ययन परिशीलन करने मे आए तो इसमे जीवन यापन का अलौकिक दृष्टिकोण प्राप्त हो। इसी दृष्टिकोण से रामायण के पात्रों के सम्बन्ध मे विचार विमर्श करेंगे। जीवन समान होता है। उसके यापन की दृष्टि मे तारतम्य होता है। स्त्री को बालक स्नेहमयी माता के रूप मे देखता हैं, पति उसको प्रेममयी पत्नी के रूप मे देखता हैं सासू उसे पुत्रवधू की दृष्टि से देखती हैं। उनमे भी प्रत्येक का देखने का दृष्टिकोण भिन्न भिन्न होता हैं।

विश्व मे घटित घटनाओं पर तुलनात्मक चिन्तन करना है। रामायणकाल बीत गया उसके पात्र भी चले गये कोई स्वर्ग मे गया, कोई नरक में गया ...किन्तु उनकी जीवन दृष्टि इस पृथ्वी पर आज भी हैं। उनके पास जीवन के विशिष्ठ आदर्श थे जीवन यापन की दृष्टि थीं। यहाँ प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या वे प्राचीनकाल के आदर्श आज के इस नवीनतम (Modern) युग मे समुचित हो सकते है ?

प्राचीन आदर्शों की अर्वाचीन काल में उपयोगिता

रामायण काल हजारो वर्ष प्राचीन है अर्थात् रामायण के पात्र हजारो वर्ष प्राचीन हैं। पात्रों का चरित्र चित्रित किये हुए आज हजारो वर्ष व्यतीत हो गए, क्या आज के इस वर्तमान जीवन मे, उनके चरित्र निर्माण उनके आदर्श युग गत हो सकते हैं ?

चित्रांकित पात्रों को देखा जाना, सुनने एवं मनन करने से मानव मन पर प्रभाव होता है कि नहीं ? इतर मानव मन पर पड़ने वाले प्रभाव से यह अनुमान किया जा सकता

है कि उस काल के आदर्श वर्तमान मे भी प्रभावशाली है।

'प्राचीनकाल की बाते आज समुचित नही' यह बात एकान्त रूप से सच नही है। प्राचीनकाल मे पानी पीने की क्या विधि थी ? पहले मुह से पानी ग्रहण करते थे तो क्या आज नाक से ग्रहण करते है ? इस प्राचीन रीति को परिवर्तित कीजिए न ? मुँह से ग्रहण करने की नीति तो प्राचीन हो गई है, अब नाक से ग्रहण करना प्रारम्भ करिए न ?

आदि मानव किससे खाता था ? मुँह से ही न ? ऐसा तो नही है न कि आयात का स्थान निकास का हो गया हो और निकास का स्थान आयात का स्थान हो गया हो ? कितना अधिक प्राच्य अध विश्वास (Arth odoxy) ? कैसी पूँछ पकड रखी है ? आदिवासियो मे रीति आज भी वैसी ही चल रही हैं। लेकिन जिस वस्तु का स्थान जहा होता है वहाँ ही हो सकता है।

जैसे हवा, पानी और अन्न प्राचीनतम होते हुए भी वे आज उतने ही उपादेय है, वैसे ही अहिसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह आदि धर्म भी उतने ही उपादेय हैं। 'ये प्राचीन बाते है,' ऐसा कहकर इनका तिरस्कार नही किया जा सकता। इस प्रकार अहिसा आदि धर्मो के निर्वाह मे विनय, नम्रता, सरलता, क्षमा, परमात्म-भक्ति, गुरु-भक्ति आदि सहायक थी। 'ये प्राचीन समय की रूढियाँ, हैं' ऐसा कहकर इनकी उपेक्षा नही की जा सकती। भारतीय सस्कृति की जीवन पद्धति के प्रति 'यह प्राच्य हैं' ऐसा कहकर वर्तमान मे उसकी अवगणना, एव उपेक्षा करते हैं उसके भयकर परिणाम भी दृष्टिगत हो रहे है। ऐसी विकृति आ रही है कि कोई भी उसे रोकने मे समर्थ नही लगता।

सभा साहन, जमाना परिवर्तित हो गया है।
महाराजश्री जमाना' इसका अर्थ क्या ?

जमाना क्या है ?

एक कालेज के प्रोफेमर मेरे पास आए। चर्चा करते ममय क्या जमाना है ? कसा जमाना है" ? इस तरह जमाने के सम्बन्ध मे अत्यधिक विचार विमश हुआ। आधा घटे से भी अधिक समय निरतर वार्ता चलती रही कि जमाना' ऐसा हो गया है। वमा हो गया ह ? 'यह सुनकर मैं तो ऊब गया। फिर मैंने पुन प्रश्न किया "जमाना क्या ह ?"

तुम और मै ? क्या इसके अतिरिक्त भी जमाना हैं ? जमाने से मनुष्य को निकाल दे तो क्या शप रहेगा ? शून्य। यदि 'जमाना' शब्द का विश्लेपण किया जावे तो ? जो 'ज' (हाँ) कार की बातें कर। मान' ही मानो। इसका नाम जमाना। किसी वस्तु का सच्चा विचार निराग्रह से ही हो सकता हैं आग्रह से नही।

गुणदृष्टि से देखो

रामायण का भले ही हजारा वप हो गए, उससे कोई मतलब नही। उसका चरित्र अपने को प्रभावित करता है। सती सीता के चरित्र का ल। उनका शील, उनका चरित्र हमारे मन को आकृष्ट करता ह। रामचन्द्रजी का ले लीजिए उनकी पितृ भक्ति ? उन्हाने पिता के वचनार्थ कसा महान् त्याग किया ? यह सुनकर अपना हृदय द्रवित हो उठता है। अत इस और देखने का सच्चा दृष्टिकोण चाहिए। यूँ तो राम की

गाली देने वाले भी मिलते है। क्योकि उनके पास राम के अद्भुत गुणो को देखने की दृष्टि नही है। वे श्रीराम को दोष दृष्टि से देखते है और राम की मूर्ति का अपमान करते है। कैसा पागलपन है? इस तरह दोपदृष्टि से देखने पर तो आपको इस विश्व मे कोई भी गुणवान् नही दिखेगा। तीर्थङ्कर भी दोषयुक्त दृष्टिगत होगे। महान् आत्माओ का जीवन उनका विशिष्ट धर्मपुरुषार्थ और उनका अचल सत्व सदा ही प्रेरणादायी और आदर्शभूत होता है। इसे ठीक तरह देखने की गुण दृष्टि ... ...ज्ञानदृष्टि अपने पास होना चाहिए। हम आज राम और सीता, लव और कुश को याद नही करेंगे किन्तु चर्चास्पद रावण को याद करेंगे। अनेक रामायणे लिखो गई है। जैन धर्म मे श्वेताम्बर परम्परा के पीछे दिगम्बर परम्परा का प्रादुर्भाव हुआ। दोनो मे रामायण लिखा गई है। दिगम्बरो मे 'पद्म पुराण' है। श्वेताम्बरो मे श्री विमलाचार्य द्वारा 'पउम चरियम्' नामक ग्रन्थ की रचना की गई। आचार्य श्री हेमचन्द्राचार्य ने 'रामायण' रची। मेरे ज्ञानानुसार अभी तक कुल २९ रामायणे का सृजन हुआ है।

प्रत्येक भारतीय तत्वज्ञानी है:

वाल्मीकी रामायण और तुलसीकृत रामायण ये सर्वत्र प्रसिद्ध है। तुलसीकृत रामायण की चौपाई ८० वर्ष की वृद्धा के मुँह से भी सुनने से जीवन के वास्तविक आनद की अनुभूति होती हैं। प्रसगागमन पर तत्काल ही तुलसीकृत रामायण की चौपाई मुखरित हो उठती है। एक वार एक परदेशी भारत की यात्रार्थ आया। उसने लिखा है कि 'प्रत्येक भारतीय दार्शनिक हैं।'

एक समय वह यात्रा कर रहा था। एक प्लेटफार्म पर दो वृद्धाएँ आपस मे लड पडी एव लडती-२ डब्बे मे चढी। उनके अतिरिक्त अन्य दो वृद्धाएँ उनके साथ मिल गइ। एक वृद्धा पहली से कहती है 'क्या लडती हो ? अपन सभी मुसाफिर हैं। एक स्टेशन पर तू उतर जायगी, तो दूसरे स्टेशन पर यह उतर जायगी। जिन्दगी तो चार दिन की चादनी की तरह है। वे दोनो वृद्धाएँ शात हो गई एव आपस मे बातें करने लगी। छोकणी सू धनो के चटका र लगने लगे। उक्त परदेशी इस डिब्बे मे था। वह हिन्दी भाषा तो समझता नही था। इसलिए उसने एक अन्य साथी से पूछा। यात्री ने उसे यह बात अग्रेजी मे समझाई। तो वह बोल उठा महान् तत्वज्ञान !' (Great Philosophy) जिस ज्ञान के कारण झगडा समाप्त हो गया। कितना सुन्दर समझाता !

जो जीवन के झगडे मिटा सके उसे ही तत्वज्ञान कहते है। जो कर्म और कुसस्कारो का झगडा मिटा सके वही तत्वज्ञान कहलाने की पात्रता रखता है। तत्वज्ञान प्राप्त करने का हेतु भी यही है न ? और यदि तत्वज्ञानी भी आपस मे लडते हो तो ? विश्व मे भयकर विसवाद फैल जाए। तत्वज्ञान मे तो एकरूपता रहती हैं।

जैन रामायण

भारत की समस्त रामायणो मे यदि किसी ने रावण के जीवन को दोनो ओर से मध्यस्थ दृष्टि से देखा हैं तो वे हैं केवल विमलाचार्य और हेमचन्द्राचार्य। उनके द्वारा रचित ग्रन्थ प्राकृत (अर्ध मागधी) और सस्कृत भाषा मे है। रावण का चरित्र इनमे मध्यस्थदृष्टि द्वारा [illegible] किया गया

रहने लगे। पाताललका मे रावण-कुम्भकर्ण और विभीषण का जन्म हुआ। जन्म के पश्चात् रावण ने शीघ्र ही पराक्रम प्रदर्शित किया। अभी तो जन्म की वधाई का आनन्द रत्नश्रवा लूट ही रहे थे कि उन्हे दासी ने आकर समाचार दिया कि 'आपके पुत्र ने तो अद्वितीय पराक्रम किया है।

रत्नश्रवा के पास वश परम्परा से निरतर चलता आया एक हार था, जो राक्षस वश का था। राक्षस वश का प्रारभ भगवान् अजितनाथ के काल मे हुआ था।

राक्षस वंश ! राक्षस द्वीप ! राक्षस संस्कृति ! :

लोगो ने राक्षस की कल्पना कैसी की है ? मोटा मोटा मूँह ! मोटा कान ! सीग ! महा भयकर चेहरा ! लेकिन यह घोर अन्याय है। राक्षस तो वश का नाम था ! राक्षस सस्कृति थी ! वे प्रजा की रक्षा करते थे 'वय रक्षाम' 'हम प्रजा की रक्षा करने के लिये है, यह उनकी सस्कृति थी। 'रक्ष' धातु से राक्षस शब्द का प्रादुर्भाव हुआ।

इसी राक्षस वश में रावण हुआ। जन्म होते ही उसने पलग के पास रखे हुये डिब्बे मे से हार को उठाया। जो नौ माणक का हार था। जन्म के कुछ समय पश्चात् ही रावण ने इस हार को उठाकर अपने गले मे पहन लिया। माँ तो अपने पुत्र का यह पराक्रम देखती ही रह गई। उसे रोका नही ! उसे देखना था कि उसका पुत्र क्या पराक्रम कर रहा हैं। आप लोग हो तो ? एक दम रोक दे न ? परतु नही, अपने को ऐसा न करके देखना चाहिए कि बच्चा क्या करता है ? मनो वैज्ञानिक दृष्टि के अनुसार बालको को उनकी इच्छानुसार कुछ समय तक

काय को स्वय ही करने देना चाहिए। अपनी इच्छानुसार इन बालको से जबरदस्ती नही करनी चाहिए। अनुचित माग मे जाने लग ता समझाकर उचित माग पर लाना चाहिए।

क्या रावण के दस मस्तक थे ?

रावण ने नौ माणक का हार गले मे पहना तो नौ माणको म उसका मुख प्रतिविम्बित होने लगा। नौ माणको मे नौ मुख दिखाई दिये। नौ प्रतिविम्ब और एक मुह इस प्रकार दस मुख माने गए। ककसी ने रत्नश्रवा को बुलाकर कहा, देखो, इन नौ प्रतिविम्बा को देखो, कितने सुदर नौ मुख हैं। इस प्रकार दस मुख दिखन लगे। उस समय राजा ने कहा 'हम इसका नाम दस मुख दशानन रखगे' तब से ही उसका नाम दस मुख दशानन पडा। रावण क दस मुख पक्तिबद्ध नही थे। नौ प्रतिविम्ब और एक मुख इस प्रकार मिलकर दस मुख हुए थे।

एक भूल

अपने यहा, अष्टापद पर्वत का चित्र मदिरो म चित्रित होता है। उसमे रावण के एक पक्ति मे दस मुख चित्रित किय गय ह। मदिरो मे पत्थरो मे उत्कीर्ण चित्र तो ऐतिहासिक प्रमाण कहलायेगे न ? क्य। चित्र बनवाने वाले मदिर के प्रबन्धक वद्वान, ज्ञानी, मुनिराजो के मार्ग दशन मे चित्र बनवाते हैं। यदि एसा करें ता इस प्रकार के घोटाले न दृष्टिगत हो। समझदार प्रबन्धको का अष्टापद के चित्र मे रावण के दस मस्तक सुधार लेने चाहिए। रावण के गले मे नौ माणक का हार बना कर उसमे रावण के मुख के नौ प्रतिबिम्ब बनाने चाहिए।

कैकेसी की इच्छा :

रावण जन्म से ही मातृभक्त था। तीनो भाई जवान हो गये। हमेशा तीनों भाई माँ के पास आकर बैठ जाते। माँ उनको शौर्य और पराक्रम की गाथा सुनाती।

एक बार माँ कैकेसी अकेली बैठी थी। भूतकाल की की स्मृति आ गई। पहले लका की महारानी थी और आज ? कितना परिवर्तन ? वह खिन्न थी, उदास बैठी थी, उसी समय तीनो भाई आए। माँ को इस तरह अप्रसन्न देखकर बोले 'माँ' तुम्हारे मुँह पर उदासी क्यो है ? कोई बीमारी है ? किसी ने तुम्हारा अपमान किया है ? क्या बात है ?

माँ ने कहा 'बेटा' शरीर तो ठीक है। किसी ने अपमान भी नही किया, लेकिन मेरे हृदय का दु:ख स्पष्ट करने योग्य नही है।

क्यो ? हम तुम्हारे तीन बेटे हैं, फिर भी यह बात। हम से कहिए हम आपका दु:ख दूर करेगे। इतने मे वहाँ एक विमान आया। वह थोडा ऊँचा था, खुला था अन्दर बैठा आदमी दिखाई देता था। उसमे बेठे हुए मुकुट धारी को देखकर केकैसी के दात भिच गये। इससे रावण ने पूछा 'माँ' यह कौन गया ?'

'बस, उसे देखकर मेरा दिल व्याकुल हो उठता है। लका के राज सिहासन पर बैठा हुआ यह राजा वैश्रवण है। तुम्हारी मौसी का पुत्र है। वह अपना राज्य है। किसी तरह लका से शत्रुओ को बाहर निकालकर अपना राज्य पुनः प्राप्त हो ? कब मैं लका की राजमाता बनूँ ? यही मेरा दु:ख है।

गवण बोल उठा 'ओहो मा। इसमे क्या बात है? कल उसे हरा दंग विभीषण आ। कुंभकर्ण आ। चलो हम तीनो भाई उसे समाप्त करे।' कुंभकर्ण पहले से ही जडवुद्धि था। उसने कहा 'मा मुझ से कहो मैं अकेला ही उसका सर्वनाश करूँ। इसमे तुम्ह किसलिए दुःख करना पड रहा है।"

मॉं न कहा 'बेटे क्या इस तरह कही राज्य मिलता है। इसके लिए विद्याएँ सिद्ध करनी पडती हैं। हम लोग विद्याधर परम्परा के हैं। परम्परागत विद्याओं की प्राप्ति हेतु तपश्चर्या करनी पडती हैं।

पुत्रो न कहा—तुम्हारी इच्छा पूर्ण करने हेतु हम यह भी करने को तयार हैं।

रावण की विद्यासिद्धि : १

वहा से वे अपने पिताजी के पास गए। रत्नश्रवा से उन्होंने कहा-पिताजी, हम विद्यासिद्धि हेतु वन मे जाएंगे। पिताजी न कहा, 'पुत्रो अपनी माताजी की सहमति ले ली क्या ?'

रावण न कहा—हम वही से तो आ रहे हैं। माता की तो सहमति है।"

रत्नश्रवा न कहा—देखो मेरे पिताजी सुमाली बैठे है। उनकी सहमति लो, उनका आशीर्वाद लो।" सुमाली तो अपने पौत्रो को देखकर आशावादी बने ही थे। पौत्र दादा के पास पहुंचे और कहने लगे—दादाजी, आशीर्वाद दो। हम विद्या सिद्धि करने जा रहे हैं।

दादा ने आशीर्वाद देकर कहा—'यह प्रयोग नही है, यह तो मत्र साधना है।' सुमाली ने तीनो कुमारो को मत्र साधना की विधि समझाई। साधना के समय रखी जाने वाली साव-धानियाँ बताई। साधना मे कैसे-कैसे विघ्न आते है यह समझाया।

सत्व के बिना सिद्धि नही होती। मत्र साधना के लिए अपूर्व निर्भयता और प्रचण्ड सत्त्व चाहिए।

क्या आप जानते है कि वीसनगर का एक बनिया श्मशान मे साधना करने गया। साधना ऐसी उल्टी पडी कि वह अधूरी ही रह गई।

साधना के लिये सत्त्व चाहिए, गुरुजनो का आशीर्वाद चाहिए, अद्‌भुत मनोबल चाहिए। तब वह सिद्ध होती हैं।

सुमाली ने साधना के नीति–नियम समझाये, भय स्थान बताए। माता ने तिलक किया। माता की यह इच्छा थी कि उसके पुत्र विद्या सिद्ध करले तो उसका मनोरथ पूर्ण हो।'

पुत्रो ने भीमारण्य' नामक जगल मे जाकर साधना की रावण ने एक हजार विद्याएँ सिद्ध की। विभीषण और कुभकर्ण ने भी विद्याएँ प्राप्त की।

अत मे रावण ने मातृ–भक्ति का आदर्श पूरा किया। इस प्रकार का आदर्श यदि हम जीवन मे निभाएँ तो कितनी ही माताओ को शाति और समाधि प्रदान कर सकते है। मातृ—भक्ति इस-देश का मौलिक गुण है। माता बच्चे को जन्म देती है, जन्म के पश्चात् प्रथम परिचय माता से ही होता है इसलिए माता के प्रति भक्ति एव स्नेह होना स्वाभाविक है।

रावण मातभक्त था। माता की इच्छा पूर्ति हेतु उसने घोर तप किया, विद्याएं सिद्ध की वैश्रवण के साथ युद्ध किया। वैश्रवण को पराजित कर लका वापिस ले ली और इस प्रकार माता की मनोकामनाएँ पूर्ण की।

यह सब होने के बाद रावण के मन मे एक उत्कण्ठा उत्पन्न हुई। इस विजय, पराक्रम और विद्या सिद्धि ने उसकी तृष्णाओ को बढा दिया। उसने विचार किया कि अब उसे भारत के तीनो खण्डो का प्रभुत्व भी प्राप्त करना चाहिए।

अतृप्ति और तृष्णा

शक्ति सत्ता और वैभव का मेल अर्थात् तृष्णाओ की वृद्धि। अब तक रावण एक हजार विद्याओ का स्वामी था। वह लका का अधिपति भी बन चुका था। लका द्वीप के अद्वितीय वैभव का वह मालिक बन गया था। उसकी शक्ति, सत्ता, और वैभव मे वृद्धि हो गई थी। अब शनै शनै उसकी तृष्णाओ की मात्रा मे भी वृद्धि हो रही थी। यदि मनुष्य को शक्ति और प्रसन्नता पूर्वक जीवन व्यतीत करना हो तो तृष्णाओ से मुक्ति प्राप्त कर सतोषी बनना चाहिए। सतोषी बने बिना शान्ति प्राप्त नहीं होगी। जो है या जो स्वाभाविक रूप से मिला है, उसी मे सतोष प्राप्त करो। हाय पैसा हाय पैसा' मत करो। यह धुन मनुष्य को असन्तोष की ओर ले जाती है और असतोष तृष्णा के प्रवाह मे खीच ले जाता है।

रावण मे असन्तोष की आग प्रज्वलित हो उठी थी। उस की दो प्रकार की तृष्णाएँ थी। १—राज्य की सीमा का विस्तार २—अन्तपुर की रानियों की वृद्धि।

इन तृष्णाओ से ही उनमे भयकर मानसिक अशान्ति उत्पन्न हुई एव अन्त मे वे ही तृष्णाएँ उसकी मृत्यु का कारण बनी थी। हमे उसके अवगुणो मे से नई जीवन दृष्टि प्राप्त करना है।

उत्थान का दृष्टिकोण :

दूसरे की असफलता अपने लिये सफलता का आदर्श हो सकता है। एक मनुष्य ने जमीन पर पाँव रखा वह खड्डे मे गिर गया, वह फिसला ...... यह देखकर अपना दृष्टिकोण कैसा बनेगा ? यही कि मैं इस खड्डे मे न गिरु। सभल कर चलूं। इस प्रकार एक का पतन दूसरे के उत्थान का आदर्श बन सकता हैं। यदि उसका दृष्टिकोण उत्थान का हो तो।

एक का रूदन दूसरे के आनन्द का कारण हो सकता है। राम रो रहे थे। लक्ष्मणजी की मृत्यु हो गई थी। विरक्त बने लव और कुश ! राम का रुदन इतना करुण था कि सारी अयोध्या नगरी रो रही थी। इन दिनो राम के साथ किसी ने अपने आसु न वहाये हो ऐसा कोई शेष नही था। किन्तु उससे हुआ लव कुश का उत्थान। उन्होने विचार किया कि, विश्ववद्य हमारे पिताजी सिसक सिसक कर रो रहे है। उनको कौन रुला रहा है ? रुलाने वाला है राग। इसलिए इस ससार मे किसी भी सुख पर राग करना भयकर दु ख का कारण है। रामचन्द्रजी लक्ष्मण के मृत शरीर को अपनी गोदी में लिये बैठे थे, वहा से लव-कुश रवाना हो गए और 'अमृत घोष' नामक महामुनि के पास चारित्र अगीकार कर लिया। यही मानव जीवन को सफलता पूर्वक जीने की तेजोमय दृष्टि है।

विन्न मे घटा घन्ताआ, निमित्त प्रसगा, व ता का हम जिस दृष्टि म न्यते है उनाा मल्याकन जिस दृष्टि से नरता है, उ ही आधार पर हमार मन और जीवन का निमाण हाता है।

रावण की अनुप्ति हमारी तप्ति का नारण बन। उसकी व्याकुन्ता हम तप्ति का माग बताय। जो नुन्द मिले उसी म सन्तोष नरे ।

रावण की सदाचार प्रियता •

रावण दिग्विजय नरता ० आगे बढ रहा था। वह नन कुबर राजा वे नगर के पास आ पहुचा। नन कुबेर राज के पास 'आशाली' विद्या थी। उस विद्या का प्रभाव नगर के चिने की रक्षा अग्नि द्वारा करता था नगर का किला जलता प्रतीत हाता था। रावण की हजार विद्याएँ भी उसके आगे नत थी। उसन कुभकर्ण और विभीषण स मत्रणा की। रावण कनपटी पर हाथ रखे बठा था। उसी समय उसके डेरे मे एक स्त्री न प्रवश किया। उसने कहा मैं राजा नल कुबर की रानी की दासा हूँ। मेरी रानी उपरभा' ने आपके प स यह सदश भेजा है कि लकापति रावण का रानी 'उपरभा' अतरग स चाहती हैं उसे मन से अपनाए या वचन द तो नगर मे प्रवश करने की विधि मेरी रानी आपका बता सकती है।

रावण किस चिन्ता मे बठा था ? नगर म प्रवेश करन की चि ता मे न ? अब उसक पास आता है आमत्रण ! एक नही, दो आमत्रण, रानी का स्वीकार करन का और नगर प्रवश का। उसी समय दासी की बात सुनकर रावण विभीषण की ओर

देखकर मुस्कराया। इस मुस्कराहट का अर्थ विभीपण ने 'स मति' लिया। उपरभा को दासी ने जो आमत्रण दिये थे वे वडे भाई को स्वीकार है। यह विचार कर विभीपण ने दासी से कहा 'तुम्हारा आमन्त्रण स्वीकार है। उनकी इच्छा पूर्ण होगी' दासी वहुत प्रसन्न हुई। उसने रानी के पास पहुंचकर कहा 'महारानी, कार्य सफल हो गया। रावण ने स्वीकृति दे दी।

'क्या स्वीकार किया ? रानी ने पूछा।

'हाँ-हाँ उन्होने स्वीकार कर लिया, अव आप उनका नगर मे प्रवेश कराइये।

एक महत्वपूर्ण वात यह थी कि दासी के गमन उपरान्त रावण ने विभोपण को आडो हाथ लिया......... एव फटकारा। उसने कहा 'हे विभीपण, तूने व श को कलकित कर दिया। तुमने मेरी महमति कैसे समझ ली। मै तो रानी की मूखेता पर मुस्कराया था। वह मुस्कराहट तिरस्कार की थी। कभी रावण ने परस्त्री को हृदय मे स्थान दिया है क्या ? रावण क्या कहता है ? विभाषण ने उपरभा की दासी को सहमति दे दी थी, इसलिए रावण वहुत अप्रसन्न था। दासी को मना करने से पूर्व तो दासी वहाँ से चली गई। इस प्रकार रावण पर स्त्री को अपना शरीर और हृदय सौपने को कदापि तत्पर नही था उसका हृदय प्रज्ज्वलित हो रहा था।

विभीपण भय से थर-थर काँप उठा, एव पुन. स्वस्थ होकर उसने बिगडती वात सम्भाल ली। उसने कहा 'वडे भाई, क्या, मै आपको नही पहचानता ? राजनीति मे थोडी ऐसी चाले खेलना ही पडती है... एक वार राज्य मे तो प्रवेश करे

तत्पश्चात् उपरभा को 'माता' सम्बोधित कर इस समस्या से छुटकारा पा लेना। राजनीति मे तो सब कुछ मान्य है। मैं सब जानता हूँ।' यह कहकर विभीषण ने बात बदली। रावण सदाचार का ऐसा पक्षपाती था।

उपरभा 'अशाली' विद्या समेट लेती है। नल्कुबर के नगर मे रावण सेना के साथ प्रवेश करता है। रावण नलकुबेर को जीवित पकड कर पीजरे म ब द कर देता है। भाइयो के साथ रावण नलकुबेर के महल मे प्रवेश करता है जब वह राजमहल म प्रवेश करता है तो उपरभा उसका स्वागत करती है। रावण दोनो हाथ जोड़कर कहता है 'सचमुच, आपने बहुत सहायता की है "

रानी—क्यो मुझे 'आप" कह रहे हैं ? मुझे तो 'तू' कहना चाहिए।

रावण—"तुम तो मेरी माता तुल्य हो।"

रानी—'क्या कहते हैं आप ?"

रावण—"ठीक तो कहता हूँ। तुम्हारा उपकार कभी नही-भूल सकता हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम अपने पति के प्रति वफ़ादार रहो।"

तब उपरभा की आख से आग बरसने लगी। रावण की आंख मे से अमृत बरस रहा था। उपरभा क्रुद्ध होकर पीयर चली गई।

रावण का यह सत्व समझ मे आता है ? ऐसा अद्‌भुत सत्व उसमे था। [illegible] स्वय प्रार्थना करती हो, उस समय

शील और सदाचार के प्रति वफादार रहना, जीवन मे दृढ रहना क्या सामान्य बात है ? रावण का दृष्टिकोण देखिये। वह कहता है "तुम अपने पति के प्रति वफादार रहो।"

इस वृतान्त मे से क्या उच्च जीवन जीने की दृष्टि प्राप्त होती है ? कोई बात प्रिय लगती है ? रावण के जीवन के इन दो प्रसगो मे से दो अपूर्व जीवन दृष्टि प्राप्त होती है : एक दृष्टि-मातृ-भक्ति और दूसरी दृष्टि-सदाचार दृष्टि।

उपसंहार :

दुनिया ने रावण का सीता अपहरण याद रखा परन्तु उपरभा का विसर्जन भुला दिया। रावण के जीवन के इस उज्ज्वल पक्ष को भुला दिया गया है। सामान्यतया दुनिया काले पक्ष को ही याद रखती है।

हम हमारे जीवन को अच्छी तरह जी सके, मनकी प्रसन्नता और आत्मा की पवित्रता से जी सके, इसके लिए रामायण के ऐतिहासिक पात्रो से प्रेरणा और मार्ग दर्शन मिलता है। मोक्षमार्ग के अनुकूल जीवन जीने को दृष्टिया प्राप्त होती है। छद्मस्थ व्यक्ति के जीवन का मूल्याकन गुणदृष्टि से करने पर ही उस व्यक्ति की विशेषता जानी जा सकती है, अन्यथा नही।

जीवन जीने की अपूर्व दृष्टि है-गुण-दृष्टि। गुणवान बनने के लिए गुणदृष्टि ही चाहिए। गुणवान बने विना अनन्त गुणमय मोक्ष-दशा कैसे प्राप्त हो सकती है ?

११-७-७१ रविवार

तीसरा प्रवचन

दु ख के दो प्रकार'

ससार म मुख्य रूप मे दु ख दो प्रकार के है शारीरिक दु ख और मानसिक दु ख। शारीरिक अस्वस्थता का आधार वेदनीय कर्म है। वेदनीय कर्म दो प्रकार का है साता वेदनीय और असाता वेदनीय। साता वेदनीय कर्म के उदय से शारीरिक स्वस्थता रहती है और असाता वेदनीय के उदय मे शरीर की अस्वस्थता प्राप्त होती है। असाता वेदनीय कर्म के उदय को टालने के प्रयत्न कम कारगर होते हैं जबकि मानसिक दु ख से चाह तो सहज छुटकारा पा सकते है।

मन के सुख दुख का आधार मनुष्य का दृष्टिकोण होता हैं। मनुष्य यदि विचार करने की कला सीख जाय तो वह मन से सदा प्रसन्न रह सकता है। जिसे यह कला नही आती वह सदा दुखी रहता है। बहुत से मनुष्य भौतिक सुख के शिखर पर बठकर भी रोना रोते हैं! तो दु ख के शिखर पर बैठने पर तो न जाने कौनसा राग छेडने होंगे? भैरवी या मालकोश!!

कारण क्या? इसका एक मात्र कारण हैं-विचार करने की कला का अभाव! कौन से प्रसग पर, किस विषय मे, और किन सयोगो मे किस तरह विचार करना, यह विचारने का दृष्टिकोण उसके पास नही होता। शारीरिक सुख प्राप्त होने पर भी तथा आर्थिक और पारिवारिक दृष्टि म सुखी होने पर भी मनुष्य दुखडा रोना रहता है! दुनिया जिसे सुखी समझती

है, उस व्यक्ति को जब हम पूछते है कि- 'क्यो भाई, सुखी हो न ? जवाब मिलेगा–अरे महाराज, क्या कहे हमारे दु ख की बात ?

महाराज कहते है-'अरे ! तुम को सुखी देखकर कितनों ही के लार टपकती है कि 'मिस्टर सो एन्ड सो' कितने सुखी है ? इनके बढिया पेढी है, पुत्र है, कुटुम्ब है, दो चार मोटर है, बढ़िया बगला है, अच्छी बहुए है, अहो ! कितने सुखी है वे ! लाल बू द उनका शरीर है।

सदा दुःख की शिकायत:

ऐसे व्यक्ति को पूछते हैं कि 'कैसे हो ? सुख शाति मै हो न ?' हमे भी आपकी सुख-साता पूछनी पडती है न ? आप हमारी सुख-साता क्यो पूछते हो ? हम आसाता मे हो तो भी; 'देव गुरु पसाय साता छे' यह जवाब देते है। और आप ? कदाचित हम पूछे कि 'श्रावकजी साता मे हो न ?

'नही, साहब ! यह तकलीफ है, यह कठिनाई है··· ··· सदा शिकायत करते हो न ?

'स्वामी, सुख-साता है ?'' ऐसा पूछने पर हम कहते है, ''देव गुरू पसाय !'' यदि हम सदा शिकायत करते रहे तो फिर आप सुख-साता पूछेगे क्या ? इतनी सी ढया चढ़कर ऊपर आओगे भी क्या ?

जिसके पास विचार करने की कला नही होती वह सदा दु खी रहने वाला है। मनुष्य का स्वभाव दो प्रकार का होता है परावर्तनीय और अपरावर्तनीय। परिवर्तन को प्राप्त

हो वह परावर्तनीय और परिवर्तन न हो तो अपरावर्तनीय। मनुष्य का स्वभाव ऐसा है कि उसके ९९ सुख हो और एक दुख हो तो उसकी दृष्टि बार २ दुख की तरफ ही जाती है। वह उस एक दुख को बार बार अपनी दृष्टि के सामने लाकर जला करता है। अपने सुख की तरफ देखने की उसकी आदत नही। अपनी आदत किस ओर देखने की है? केवल दुख की ओर। हमे ऐसी कला सीखनी है कि दुख की तरफ दृष्टि ही न जाय सुख की ओर ही दृष्टि लगी रहे मन की प्रसन्नता बनी रहे। हमे यह परिवर्तन करना है। दुख ने हमारे चारो ओर घेरा डाल रखा है। दुख की तरफ देखते रहने के बदले सुख का मार्ग ढूढने का प्रयत्न करना चाहिए। बाड होती हैं तो निकलने का मार्ग भी होता है। न हो तो कर देना पडता है। सुख का मार्ग दिखाई पडने पर हृदय प्रसन्न हो उठता है और उस मार्ग से दुख के बाड से बाहर निकला जा सकता है।

यदि आप ऐसा कहे कि– बडा दुख है, कर्मों का भार है पाप का उदय है सब कुछ नष्ट-भ्रष्ट हो गया है।" तो क्या किया जाय? क्या मर जाएँ? जिसके पास सच्चा दृष्टिकोण नही होता वह अकाल-मृत्यु का शिकार बन जाता है। यदि विचार करने का दृष्टिकोण हो तो मृत्यु पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

कैकयी की पराजय

उस समय रावण पाताल लका मे रहता था। उसके माता पिता थे, तीनो भाई वहाँ थे, माता कैकेसी का ध्यान लका पर केन्द्रित था। 'कब लका का राज्य मिले, कब सिंहासन प्राप्त हो? यह पाये बिना मेरे जीवन को शान्ति नही" , कैकेसी की यह विचार धारा थी।

लका का राजा वैश्रवण कौन था ? रावण की मोसी का पुत्र था। यह कैकेसी के दिल मे काटे की तरह चुभता था। यद्यपि लका का राज्य छीना था किसी अन्य राजा ने, वैश्रवण ने नही। रावण के पितामह सुमाली के वडे भाई माली का रथनुपुर के राजा इन्द्र के साथ युद्ध हुआ था. माली मारा गया था। सुमाली वहा से भागकर पाताल लका मे आकर रहने लगा था। माली को हराने वाले वैताढच पर्वत के राजा इन्द्र ने वैश्रवण को लका का राजा वनाया था। वैश्रवण को तो सीधा माल मिला था।

वैश्रवण को लका के सिहासन स हटाकर राज्य ले लेने की कैकेसी की इच्छा से प्रेरित होकर तीनो भाइयो ने लका पर आक्रमण किया। वैश्रवण कम पराक्रमी नही था। वह अपने विशाल सैन्य के साथ युद्ध के मैदान मे आया। भयकर युद्ध हुआ। तीनो भाई युवक थे, शस्त्र से सज्जित थे और विद्याओ से अलकृत थे, वैश्रवण पराजित हो जाता है। पराजित वैश्रवण युद्ध के मैदान में खड़ा खडा विचार करता है-"मै हार गया हूँ। अव मुझे लका मे प्रवेश करने का अधिकार नही है। हार जाने के कारण मैं दुनिया की दृष्टि मे गिर चुका हूँ। वैश्रवण अपने आपको हारा हुआ समझता है।

पराजय क्यो ?

आप अपने-आपको हारा हुआ मानते है या जीता हुआ ? आप विजय। है या विजित ? विजय के उन्माद मे है या पराजय की खिन्नता मे ?

सभा—क्या उत्तर दे साहब ? वँध जाते है।

महाराज श्री आप कहा स्वतन्त्र है जो बँध जाते हैं। आप तो बँधे हुए हो हा। हा यहाँ बँधाग तो वहासे छूटोगे। अपने आपको विजयी मानते हैं या विजित ? अरे तुच्छ विजय मिल जाय ता भी फूले नही समाते। नौकर का दो के बदले एक रुपया देकर समझा दिया हा तो छाती फूल उठेगी। भाड़ू वाले को डरा-धमकाकर चुप कर दिया होगा तो घर मे गर्व से प्रवेश करोगे।

क्या विजय और क्या पराजय ? न तो हम वास्तविक विजय प्राप्त कर सकते हैं और न हमको पराजित अवस्था का भान ही है। कर्मो से पराजित हैं, यह कभी विचार ही नही आता ! खराब आत्मा से पराजित हैं, इसका भान भी नही होता।

लका के युद्ध मैदान म खडा हुआ वभ्रवण विचार करता है 'मैं पराजित हुआ। क्या ?' वह आगे सोचता है-'मेरे पराक्रम और बाहुबल पर मुझे दृढ विश्वास था। फिर यह पराजय क्यो ? रावण ने मुझे कैसे हराया ? क्या मेरी अपेक्षा उसम शक्ति अधिक थी ? मेरे बल और पराक्रम न मुझे धोखा दिया। रावण की अपेक्षा मेरा बल कम था जिससे मेरी पराजय हुई। निबल बलवान से पराजय पाता है।

बल और निबलता किसकी देन हैं ? किसकी भेट है ? यह आप जानते हैं ? विचार तक नही।

सभा—कर्मो की देन है।

महाराज-श्री कौन-से कर्मो की ? भूतकाल मे अनन्त कम किये हैं उनमे से कम के उदय स किस बल मिलता और कौन

से कर्म से निर्बलता मिलती है ? वीर्यान्तराय कर्म का उदय आता है तो हम निर्बल होते हैं, दीन-हीन बन जाते है फिर चाहे जितने उपचार करो, कुछ नही होने का। वीर्यान्तराय कर्म का क्षयोपशम होता है तो शक्ति की वृद्धि होती है ।

वैश्रवण का चिन्तन :

वैश्रवण विचार करता है "दुनिया मे हलचल मच गई है कि वैश्रवण जैसा महान् राजा पराजित हो गया है। अब मुझे क्या करना चाहिये ? क्या मै यहा से चला जाऊं और दूसरे राजा की मदद लेकर फिर आक्रमण करूँ ? मान लो कि मैंने लका पर विजय प्राप्त कर ली परन्तु इस बात की क्या खातरी है कि रावण विशेष बल और विशेष सैन्य लेकर मुझ पर फिर विजय न प्राप्त कर ले ? इस प्रकार प्राप्त होने वाली विजय क्या शाश्वत विजय हो सकती है ? अतः रावण पर विजय प्राप्ति का विचार निरी मूर्खता है। अभी मानव-जीवन अवशिष्ट है तो उसका उपयोग कर लूँ। त्याग के मार्ग पर जाऊँ, सयम के मार्ग पर चलूँ। सचमुच चारित्र-मार्ग पर चलकर आन्तरिक शत्रुओ को पराजित करने का प्रयत्न करूँ।'

उसका वासना-वासित मन दलील करता है' 'दुनिया कहेगी-'देखो यह राजा हार गया अत. इसने दीक्षा ले ली।" इससे धर्म की अवहेलना होगी।"

क्या पराजय में चारित्र लिया जाय ?

वैश्रवण राजा था। कोई छोटा-मोटा नही, लका-द्वीप का सम्राट् था। उसकी कीर्ति चारो ओर फैली हुई थी। उसका

बाह्य मन तर्क करता है- नही नही, दीक्षा लेनी हो तो लेना परन्तु एक बार तो विजय प्राप्त कर ले। नही तो सबकी निंदा होगी। लोग कहेगे-दीक्षा लेने वाले ऐसे होते हैं।" इसमे धर्म की भी निंदा होगी चारित्र ऐसी अवस्था मे नही लिया जा सकता।"

बाह्य मन द्वारा इस प्रकार तर्क किये जाने पर अन्तमन ने कहा 'दुनिया तेरा यशोगान करे या निंदा करे, इससे तुझे क्या मतलब? यह यश निर्वाण नही दे सकता। यह अपयश नरक मे नही ले जा सकता। दुनिया ताली बजावे इससे उर्ध्वगामी नही बन सकते। यह तो दुनिया है, क्षण क्षण में बदलने वाली दुनिया!

दुनिया का कितना विचार किया जाय?

जब लक्ष्मण इस प्रकार विचार कर रहा है, तब उसके आसपास की स्थिति कैसी थी? इसका विचार करिये। चारो तरफ खून के गड्ढ भरे है, हजारो मनुष्यो के कलेवर पड़ हुए हैं- ऐसे स्थान पर लक्ष्मण ऐसा विचार कर रहा हैं। ऐसे सयोगो मे ऐसे विचार किये जा सकते हैं? हा अवश्य किये जा सकते हैं। वह सोचता है दुनियाकी यश या अपयश से क्या? मेरी अन्तरात्मा कहती है कि मैं सत्य मार्ग पर चल रहा हूँ। मुझे किसी की परवाह नही। दुनिया यानी स्टेन्ड रहित ढोलक! कभी या बजता है और कभी या। कभी बाजी बनता है और कभी पाजी।

दुनिया के शब्दो पर जो जीने का प्रयत्न करता है वह जीवन मे रम्यता नहीं पा सकता है। जो मनुष्य दुनिया के

शब्दों से 'मैं अच्छा या बुरा' मैं आराधक या विराधक ऐसा निर्णय करता हो उसकी दृष्टि दुनिया की तरफ रहती है। वह दुनिया की दृष्टि मे ही अच्छा दिखने का प्रयत्न करता है। अन्तरात्मा की साक्षी से वह कोई विचार नही कर पाता। दुनिया अर्थात् जिसमे मूर्खों का बहुमत होता है। ऐसी दुनिया के प्रलापो पर कैसे अवलम्बित रहा जा सकता है?

वैश्रवण का अन्तरात्मा कहता हूँ 'यदि तू अच्छे मार्ग पर है तो भले ही दुनिया अपकीर्ति करे!' वही बाह्यमन दलील करता है: 'तू उतावल कर रहा है। यह तो श्मशान वैराग्य है। श्मशान मे वैराग्य होता है? यदि होता हो तो सब विरागी हो जावें। और यदि वहाँ साधु-वेश मिले तो? वहाँ तैयार साधु वेश रखने का स्टाल खोलने योग्य है। वैराग्य आया कि चट पहिन ले।

सभा—यह तो श्मशान का वैराग्य होता है!

महाराज श्री—आप संसार मे रहते हुए अपने परिवार पर सच्चा स्नेह रखते है या नही? स्नेही के विरह मे तो वैराग्य तीव्र बनना चाहिए!

क्या सच्चे स्नेही हैं?

परन्तु आप सच्चे स्नेही भी नहीं है! संसार मे आप किसी के सच्चे स्नेही बनकर रहे हैं? संसार मे सच्चे स्नेह से जीते नही, सच्चा स्नेह दे सकते नही, और आपको सच्चा स्नेह देने वाला कोई हो नही तो ससार में रहने का क्या अर्थ है?

स्नेह कैसा होना चाहिए? राम और लक्ष्मण के बीच था! 'लक्ष्मण की मृत्यु हुई है' यह मानने को राम तैयार नही

थे। छह महीने तक उसके मृतदेह को कधे पर उठाकर फिरते रहे। आप एक दिन भी मृत देह से लगे रह सकते हैं? आपका वश चले तो उसे छूओ तक नही। नगरपालिका के नौकर सब क्रिया करें तो अच्छा लगता है न?

प्रश्न क्या छह मास तक मृत देह नही सड़ता है?

उत्तर अवश्य नही सडता है। शरीर शरीर मे अन्तर होता है। लक्ष्मण का शरीर वासुदेव का शरीर था। राम उसे प्रतिदिन स्नान कराते, विलेपन करते। उनका वज्र ऋषभ-नाराच' सघयण था। अपनी हड्डियो की तो कोई श्रेणी (क्वालिटी) ही नही। लक्ष्मणजी का शरीर विशिष्ट प्रकार का था। देवता उसकी सार सभाल लेते थे। अत मृत्यु के बाद भी उनका शरीर सडा नही।

'छह मास तक मृत शरीर सडा नही क्या?' इस प्रश्न के के बदले यो पूछो कि 'छह महीने तक स्नेह रहा? 'छह मास तक स्नेह टिकता है?' स्नेह का तत्व पाना बडा कठिन है।

श्मशान वैराग्य का अर्थ

वैश्रवण युद्ध के मदान में खडा खडा विचार करता है तब बाह्य मन दलील करता है-'तेरा यह श्मशान वैराग्य तो नही है? उस समय अन्तर मन उसका प्रतीकार करता है कि-यह श्मशान वराग्य नही है, यह तो एक ठोकर है। ठोकर लगने के बाद जो रास्ते पर आ जाता है वह चतुर माना जाता है। इशारे मे समझ जाय वह अति चतुर। इशारे मे या ठोकर लगने पर भी जो न समझे उसे क्या कहा जाय? पागल या मूख तो नहीं कहा जाय न? आप लोग बोलें तो ठीक रहे! आपको ससार मे

ठोकर लगती है ? ससार को पहचान लिया न ? अक्ल ठिकाने आ गई क्या ?

'जहाँ तक राज्य था, वैभव था, विपुल सुख सामग्री थी, तव तक भान नही आया। वास्तव मे तो उस समय भान होना चाहिये था। उस समय सिहासन काटे के समान, स्त्रियाँ भयकर सर्पिणी जैसी और सुख-वैभव विप से प्याले की तरह लगने चाहिए थे परन्तु उस समय जो भान होना चाहिए था, वह मोह के नशे के कारण नही हुआ। आज ठोकर लगी, राज्य गया ...... सुख वैभव गया, मोह का नशा उतर गया, ससार का नग्न स्वरूप दिखाई दिया ......।"

सत्ता के सिंहासन से उतरे हुए देश नेताओकी 'मार्केट वेल्यू' कितनी ? एक दम डाउन ! और सत्ता पर रहा हुआ ४२० हो तो भी 'मार्केट वेल्यू' कितनी ? तेजी ही तेजी होती है न ? सत्ता पर रहा हुआ मनुष्य अपनी कीमत कितनी समझता है ? यदि वह अपने आपको महान् समझता होगा तो जव वह सत्ता च्युत होगा तो घोर विषाद करेगा और दुःख-संताप और आर्त्तध्यान में फँसेगा। हाँ, पतन होने के वाद भी ज्ञान दृष्टि खुल जाय तो वह वच जावेगा। वेश्रवण वच गया।

वैश्रवण विचार करता है कि 'जिस समय मैं सिहासन पर था, मोहमूढ था, तव वात ही अलग थी। इतनी ठोकर लगने के वाद भी जीवन के परम कर्त्तव्य की ओर अभिमुख न होऊँ, मेरी ऑख न खुले तो मेरे जैसा मूर्ख कौन होगा ?" वैश्रवण को सच्चा आत्म-ज्ञान होता है। ठोकर किन्ही भी सयोगों में लग सकती है और उसका मूल्यांकन अलग अलग दृष्टि से हो सकता है।

वैश्रवण शत्रु के हाथो हुई घोर पराजय रूप ठोकर का मूल्याकन ज्ञानदृष्टि से करता है। पराजय का तात्विक चिंतन करता है। यदि मोह दृष्टि या अज्ञानदृष्टि से मूल्याकन किया जाता तो वह रावण पर क्रोध करता, मदान से भागकर वैर का बदला लेने की बात सोचता, उसके मन मे 'रावण रावण रावण रावण' मच जाता क्रोध और वैर की भयकर आग सुलग उठती। वैश्रवण तो ज्ञानदृष्टि से पराजय के प्रसग को देख रहा था।

घन की चोट से घाट घडो

मन के कुतर्क के सामने वह समर्पण नही करता। वासना ग्रस्त मन के पावो मे वह नही पडता। 'अच्छी बात है, यह बैठे। दीक्षा नही लेनी " आगे देखगे ' नही ! झुकने की बात नही। जब लोहा गरम हो तभी घन की चोट करके घाट घड लो। उसने युद्ध के मदान मे साधु वेश धारण किया। वैराग्य भावना तीव्र हो जाय तब खडे हो जाओ और घाट घड लो। घाट घड लेने के बाद लोहा ठडा पड जाय तो कोई चिन्ता की बात नही।

सत्पुरुषार्थ के 'आत्म कल्याण के पुरुषार्थ के तीव्र-भाव तीव्र परिणाम हमेशा जागृत नही होते, कभी कभी ही जागृत होते है। जब ये जागृत हो तब घाट घड लो। घबराओ नही, विचार मत करो-कूद पडो। लोहा लाल लाल हो गया तब घन मारना शुरु कर दो, चाहे पसीना छूटने लगे। घाट घड जाने पर तुम्हारी विजय निश्चित है।

तीन प्रकार के अध्यवसाय

शुभ भाव कहो शुभ परिणाम कहो या अध्यवसाय कहो,

एक ही वात है। अध्यवसाय अर्थात् विचारधारा। अध्यवसाय तीन प्रकार के हैं:-

(१) वर्धमान — विचार चढते रहे।
(२) हीयमान — विचार पड़ते रहे।
(३) अवस्थित — विचार स्थिर रहे।

एक वार वैराग्य आया तो उसकी तीव्रता हमेशा नही रह सकती। हमेशा तिक्त नही खाया जा सकता। हमेशा मीठा भी नही खाया जा सकता। इसी तरह विचारो की तीव्रता सदा नही वनी रह सकती है। कभी तीव्र तो कभी मद होती हैं। परन्तु एक वार जव त्याग-वैराग्य के भाव तीव्र वने तव घाट घड़ लो, 'इच्छाकारी भगवन् पसाय करी ओघा दीजिये।' खड़े होकर मागो। मांगोगे न ?

वीर बनकर कूद पड़ो :

प्रभु का पंथ वीरो का हैं, साहसिकों का है, कायर का नही, डरपोक का नही। साहसिक कूद पडता है। "मांहि पडया ते महासुख माणे देखणहारा दाझे।" त्याग वैराग्य की साधना के समुद्र मे कूद पड़ो....... देख देखकर कव तक जला करोगे ? वैश्रवण वीर है, साहसिक है, कूद पड़ता है।

वैश्रवण ने युद्ध मैदान मे साधु-वेश स्वीकार किया। पराजित अवस्था मे पराजय का रोना न रोया। मानवसहज निर्बलता पर विजय प्राप्त की, मृत्यु पर विजय पाई। इसी जीवन मे सर्व कर्मो का क्षय करके वैश्रवण ने निर्वाण प्राप्त किया। जिस दुनिया ने चारित्र अंगीकार करते समय उसकी

निन्दा की होगी उसी दुनिया ने केवलज्ञान के समाचार पाकर प्रशसा की होगी न ? अच्छा काम करते समय दुनिया निंदा करे तब Wait and see (प्रतीक्षा करो और देखो)। अच्छा काम आत्मसाक्षी और शास्त्रदृष्टि से होना चाहिए । 'मेरी आत्मा सुयोग्य माग पर है' ऐसा निणय आत्मा और शास्त्र की साक्षी से करना चाहिए।

पराजय मनुष्य का मानसिक वध कर देती है। आर्थिक क्षेत्र मे पराजय सामाजिक क्षेत्र मे पराजय, पारिवारिक या अन्य किसी क्षेत्र मे पराजय मनुष्य को मृत प्राय बना देती है, यदि उसके पास जीवन की दिव्यदृष्टि, ज्ञानदृष्टि न हो तो ।

पराजित अवस्था के रोने बढ गये है। परन्तु यह बात समझ लेनी चाहिए कि सासारिक जीवन के किसी न किसी क्षेत्र मे तो पराजित होना ही पडता है। सब क्षेत्रो मे विजय प्राप्त नही होती। आर्थिक क्षेत्र मे दृढता हो तो पारिवारिक क्षेत्र मे दुखी रहता है सन्तान और पत्नी का सुख है तो शारीरिक सुख नही होता। शारीरिक क्षेत्र मे सुख है तो आर्थिक चोट लगती है जिससे मानसिक नराश्य छा जाता है और जीवन जीने योग्य नही लगता ।

दुनिया के थर्मामीटर से मत मापो •

पारिवारिक क्षेत्र मे दृढता शारीरिक क्षेत्र मे मजबूती सामाजिक क्षेत्र मे उच्च अवस्था हो परन्तु आर्थिक क्षेत्र मे पराजय हुई हो, तो उस समय चिन्ता होती है न ? क्यो ? ऐसा क्या नहीं सोचते कि मुझे तीन क्षेत्रो मे तो दृढता प्राप्त है ? दुनिया के थर्मामीटर से अपने को मत मापो। कदाचित् आप

कहेगे कि हम दुनिया मे रहते हैं अतः दुनिया क्या कहती है, क्या मानती है यह तो हमे देखना पडता है न ?" दुनिया मे रहते हुए भी दुनिया से अलग रहना सीखना पड़ेगा। दुनिया जब तुम्हारे सत्कार्य के प्रति, धर्म-आराधना की तरफ और त्याग-वैराग्य के जीवन की ओर घृणा, तिरस्कार या अप्रियता से देखती हो तब तुम मे इतना सत्व होना चाहिए कि तुम अपने मार्ग पर दृढ रह सको।

इसी तरह संसार के किसी क्षेत्र मे तुम्हारी पराजय हुई कि दुनिया तुम्हारी निन्दा करेगी, तुम्हारा उपहास करेगी। ऐसे समय मे तुम्हारे पास सत्व होना चाहिए नही तो तुम टूट जाओगे। दुनिया को तुम बदल नही सकते। दुनिया तो अनादि-काल से सर्वत्र ऐसी ही है। चौथे आरे मे भी दुनिया तो ऐसी ही थी। उस काल मे भी जीव मरकर सातवी नरक मे जा सकते थे। आज ? आज आप चाहे जितने उखाड-पछाड़ करो तो भी पहली या दूसरी नरक तक जा सकते हो। आज के समय मे ने भारत मे सातवी नरक मे जाने वाला एक भी नमूना नही।

खधक मुनि की चमड़ी कब उतारी गई ? चौथे आरे मे। झांझरिया मुनि का वध कब किया गया ? चौथे आरे मे। पाच सौ मुनियो को घाणी मे डालकर कब पील दिया गया ? चौथे आरे मे। इसलिए 'आज दुनिया बिगड़ गई है' ऐसा मानकर मिथ्या संताप मत करो। दुनिया तो कभी अच्छी नही होती। दुनिया अर्थात् ससार। ससार तो सदा असार ही है। ऐसे ससार के थर्मामीटर से यदि आप अपने को मापेगे तो कभी आत्म-कल्याण नही कर सकेगे। जीवन मे क्षमा, नम्रता, सरलता और निर्लोभता नही ला सकते।

दुनिया से निकल जाना है ?

दुनिया का ससार का विचार मत करो। दुनिया से निकल जाना है, ससार से निकल जाने का विचार करो। दुनिया मे दुनिया की दृष्टि से नही जीना चाहिए। जिनेश्वर भगवत की वीतराग की ज्ञानदृष्टि से जीवन जीना चाहिए। अत यदि यह ज्ञानदृष्टि आपके पास होगी तो आपका मनोबल टिका रहेगा और चित्त की प्रसन्नता वनी रहगी। अत आपको पूछता हूँ कि, 'जव दुनिया आपसे विमुख हो जाती है तव दुनिया के त्याग का विचार आता है ?'

पूवकाल मे तो आयुष्य लम्बा होता था। शरीर की ऊचाई चौडाई भी ज्यादा थी। उस समय दीक्षा लेने वाले को लम्बे समय तक दीक्षा पालनी पडती थी। सनतकुमार चक्रवर्ती पन्द्रहवें तीथकर श्री धमनाथजी के समय मे हुए। उनका आयुष्य तीन लाख वर्ष का और दीक्षा-काल एक लाख वर्ष का था। एक लाख वष दीक्षा पाली वह भी किस तरह पाली ? घोर तप करके पाली। वहा मे तीसरे दवलोक म गये। आपको कितने वष दीक्षा पालनी पडे ? लाख वप नही लाख घटे भी दीक्षा पालो तो तीसरा देवलाक दिला देवें। दस्तावेज करना है ? पक्का दस्तावेज कर देता हूँ।

सभा— थोडी छूट दीजिये।'

महाराज श्री—क्या छूट चाहिय ?

एक गाव मे एक डॉक्टर आया करता। कोई साधु महाराज वीमार थे। महाराज की जाच पडताल करने के वाद वे आचाय महाराज सा के पास वटते। आचाय भगवत श्री प्रेम सूरीश्वरजी

महाराज बहुत स्नेह एव वात्सल्य से परिपूर्ण थे। उन्होने एक बार डॉक्टर को हँसते-हँसते कहा-'डॉक्टर ! तुम्हारे जैसे डॉक्टर जो साधु बने तो हम साधुओ की बड़ी अनुकूलता रहे।' डॉक्टर भी पक्के थे, उन्होने कहा 'साहेब, आप जैसे गुरु मिलते हो तो दीक्षा ले लू, परन्तु एक छूट दे तो ?

आचार्य महाराज ने पूछा, 'क्या छूट चाहिए ?'

डॉक्टर ने कहा 'सदा स्नान करने की।'

आचार्य महाराज हँस पड़े और डॉक्टर से कहा 'ब्रह्मचर्य का स्नान करना न ?

आपको कौन सी छूट चाहिए ?

काल का दोष देखने की आवश्यकता नही। काल बहुत अच्छा है। काल का सदुपयोग करना आना चाहिए। वर्तमान समय मे थोड़े समय तक पाला हुआ चारित्र भी उत्तम फल दे सकता है। इसके लिए ज्ञानदृष्टि की आवश्यकता है।

वैश्रवण ने पराजित अवस्था मे जो कदम उठाया, चारित्र अगीकार किया, उससे उसकी आत्मा को संतोष हुआ आत्मा की तुष्टि हुई।

वानर द्वीप : वाली राजा :

वैश्रवण ने पराजित अवस्था मे चारित्र लिया वाली ने विजयी अवस्था मे चारित्र अगीकार किया। उस समय वानर द्वीप का राजा वाली था। उस द्वीप पर वानर बहुत रहते थे। इससे उस द्वीप का नाम वानर द्वीप पड़ा। वहाँ राज्य करने

वाले विद्याधर मानव थे। इस द्वीप के निवासियो का वश भी 'वानर वश' कहलाया। परन्तु उनको लोगो ने सचमुच वानर समझ लिया। वानर द्वीप पर रहने वाले विद्याधर मनुष्यो को पूँछ वाले बदर मान लिये। वास्तव मे तो उस प्रदेश का नाम वानर द्वीप था। जैसे रूस मे रहने वाले रूसी, भारत मे रहने वाले भारतीय वैसे वानर द्वीप मे रहने वाले 'वानर' कहलाये।

उस वानर द्वीप पर राजाओ की जो परम्परा चली उसमे 'वाली' नामक राजा हुआ। 'वाली' अपूर्व पराक्रमी था। वानर द्वीप के राजाओ का राक्षस वश के राजाओ के साथ पूर्व काल से ही मित्रता का सबध था। मित्रता के कारण वे परस्पर सुख-दुख मे एक दूसरे की सहायता करते थे।

प्रशसा किसके सामने ?

एक बार रावण राजसभा मे सिहासन पर बैठा था तब एक पर्यटक विद्याधर सभा मे आया रावण ने उसे पूछा—कौन कौन से देश मे जा आये ? क्या नवीनता देखी ? उसने कहा, 'वानर द्वीप पर राजा वाली का प्रभाव अद्वितीय है, वह प्रजा के हृदय मे बस गया है। उसके प्रभाव और प्रताप से मैं बहुत प्रभावित हुआ हूँ।' उसने वाली की जी भरकर प्रशसा की। यह प्रशसा रावण को पसन्द नही आई जची नही।

किसके सामने किसकी प्रशसा ? अभिमानी या ईर्ष्यालु के समक्ष गुणियो की प्रशसा न करो। हर्षोन्मत्त होकर भान भूले तो अर्थ का अनर्थ हो जावेगा।

अभिमानी के सामने उसके प्रतिस्पर्धी अथवा गुणी आत्माओ की प्रशसा नही करनी चाहिए। अभिमानी मनुष्य

अपनी ही प्रशसा सुनकर प्रसन्न होता है। यदि आप सरल हृदय से किसी गुणीजन को तारीफ अभिमानी के समक्ष करोगे तो कदाचित आप उस गुणीजन को सकट मे डाल दोगे। वह अभिमानी व्यक्ति गुणीजन की प्रशसा सुनकर ईर्षा से जल उठेगा वैर वृत्ति वाला बनेगा और कदाचित् उसे आपत्ति के गर्त्त मे धकेल देगा अत धर्म की, सज्जन पुरुषों की प्रशसा योग्य स्थान पर ही करना चाहिए।

उस पर्यटक ने तो सरल भाव से वाली की प्रशंसा की उसे सुनकर रावण को विचार हुआ कि 'ऐसा है वाली'? उसने प्रधान को बुलाकर कहा, 'वाली को समाचार भेजो कि वह मेरी सेवा मे आवे, यह परम्परा है। वानर द्वीप के राजा लका के राजाओ की सेवा करते आये है। तू क्यों नही आया? उसके बापदादा को राज्य किसने दिया? रावण के पूर्वजो ने राज्य दिया है।'

प्रधान ने वाली के पास दूत भेजे। दूत ने जाकर वाली को सदेश दिया। रावण का आज्ञा मानने के लिए कहा।

रावण का वाली के साथ युद्ध :

वाली दूत की बात सुन रहा था। वह अद्वितीय पराक्रमी और मेरु जसा निश्चल था। वह छिछला नही था। छिछला होता तो उछल पड़ता। छिछला शीघ्र उछल पड़ता है।

आप कितनी गालियां सहन कर सकते हैं?

सभा—पहली गाली पर ही उछल पडते है।

महाराज श्री—वाली तो गभीर था। गभीरता किसका नाम ? गभीरता का अथ समझते हो ?

समुद्र मे एक पत्थर डालो, समुद्र कीचड बाहर नही फकता। कितने पत्थर डाले तो कीचड बाहर आता है ?

सभा—बिल्कुल नही आता है।

महाराज श्री—गभीर बनना अर्थात समुद्र जमा बनना।

गालियो के पत्थर पडने पर उछल न पड। सहन करो। वाली गभीर है। वह कहता है, दूत तू दूत है अत अवध्य है। (दूत चाहे जसा विरोध पत्र लेकर जावे तो भी उस पर प्रहार नही होता था, ऐसी प्राचीन राजनीति थी।) तुझे क्षमा करता हूँ। लकापति को कहना, अपना पूव जा से मित्रता का सबध रहा हुआ है। 'स्वामी सेवक' का सबध कभी नहा रहा। मित्र एक दूसरे की सहायता कर इससे स्वामी-सेवक नही हो जाते। मित्रता का सबध तोडने का पहला कदम मैं नहीं उठाना चाहता। मैं मित्रता तोडना नहीं चाहता।'

दूत लका पहुचा। रावण को वाली का सदेश दिया। पर थोडा बघार लगाकर। अर महाराजा -वाली तो अभिमान का पुतला है पुतला। क्या उसका घमड ? वह सेवक होने के लिए कतई तयार नही। यह सुनकर रावण तो सिहासन से खडा हो गया और विभीषण से बोला, 'सैन्य तयार करो, वानर द्वीप पर चढाई करना है।' सागर तुल्य राक्षसो का सैन्य लेकर रावण ने वाली पर आक्रमण किया। वाली भी तैयार था। आमने सामने सेनाएँ डट गयी। भयकर युद्ध शुरु हुआ। हजारो सनिक हजारों हाथी-घोडे खून के खड्डों मे तडफ तडफ कर मरने

लगे। घोर प्राणी–सहार देखकर वाली का करुण हृदय द्रवित हो उठा। वाली रावण के पास पहुचा और वोला 'हे दशमुख, विवेकियो के लिए तो जीव मात्र की हिंसा वर्जनीय है तो पचेन्द्रिय हाथी-घोड़ और मानवो की हिंसा की तो वात ही क्या ? तुम कदाचित् कहोगे कि 'शत्रु पर विजय प्राप्त करने के लिए जीव वध करना ही पडता है। परन्तु पराक्रमी पुरुष अपने ही वाहुवल से विजय का इच्छा करते हैं। रावण ! तुम पराक्रमी हो, श्रावक हो, यह सेनाओ का युद्ध छोडो, यह प्राणियो का घोर सहार नरक का कारण होगा अत. अपन दोनो ही युद्ध कर ले।

रावण भी धर्म को समझने वाला था। उसने वाली का आह्वान स्वीकार कर लिया।

रावण वाली की बगल में :

रावण और वाली के बीच घोर सग्राम शुरु हुआ। दोनो पक्ष की सेनाओ का युद्ध वन्द हो गया। युद्ध-विशारद रावण ने वाली का वध करने के लिए शस्त्र का प्रयोग किया। मन्त्र-प्रयुक्त अस्त्रो का उपयोग किया। परन्तु निष्फल। वाली ने सव शस्त्र-अस्त्रो को निष्फल कर दिया। रावण क्रोध से जल उठा। चन्द्रहास तलवार लेकर वाली पर झपटा परन्तु वाली सावधान था उसेने वॉये हाथ से रावण को पकडकर वगल में दवा दिया। वाली विद्याधर था, शक्तिशाली था। उसने आकाश मे उड़ना शुरु किया। वह जम्बूद्वीप की प्रदक्षिण देने लगा।

आपने जम्बूद्वीप का नक्शा देखा है ? समझा है ? यहां उपाश्रय मे नही है। नही तो आपको समझाता। जम्बूद्वीप का पट उपाश्रय में होना चाहिए। इसी तरह तत्त्वज्ञान के अन्य भी

मानचित्र हो तो हजारो स्त्री-पुरपा को नान प्राप्त हो।

उपाश्रय तो तत्त्वज्ञान दने वाली पाठशाला है। यहाँ ऐसे पट बनवाना है ? आइडिया (idea) है ? उपाश्रय मे जन धम दशन के तत्त्वो के नमे होने चाहिए।

उत्तर—साहेब, इच्छा तो हैं जम्र होने चाहिए।

मह राज श्री—तो रूपरेखा बताऊँ ? लाखो रुपयो को क्या कराग ? देवस्थान की जायदाद का राष्ट्रीयकरण होगा ता ? अत हम कहते हैं कि देवद्रव्य या ज्ञानद्रव्य जमा मत रखिए। बको म रुपये रखते हो न ? बक तुम्हारे पैसे कहा-कहा उधार देते ह ? कसा दुर्व्यय हो रहा है, यह खबर है ? कर करलखाना को भी पसा उधार देते हैं। अनेक आरम-समारमा में पसा लगाया जाता है।

व्यवस्थापक समझेंगे क्या ?

लाखा रुपये क्या जमा रखत हो ? क्या भारत मे जिनालयो के जीर्णोद्धार का काय नहीं है ? क्या ज्ञान-भडारा को समृद्ध करना दोष नही है ? सरकार की दृष्टि धम स्थाना की सम्पत्ति पर भी लगी हुई है। लाखा के प्रबध का माह छोडा।

उपाश्रयो मे आठ कम छह लेश्या, चार कषाय जम्बू-द्वीप चार गति ऐसे पटा का निर्माण कराया जा सकता है। अत हमारा कहना मानो। कदाचित कल्निमुन्त व्यवस्थापक न समझें परन्तु आप ता समझदार हैं न ?

'वाली ने जम्बूद्वीप की प्रदक्षिणा दी' ऐसा कहा, तब आपको जम्बूद्वीप की कल्पना आई? नही। तो फिर यह बात परीकथा जैसी लगती है न? यदि मैं कहूँ कि-'दुनिया की तीन प्रदक्षिणा दी' तो शीघ्र ही पृथ्वी का गोला आपके ध्यान मे आ जावेगा। क्योकि वह पाठशाला मे देखा है। ऐसे पृथ्वी क गोले तो जम्बूद्वीप मे अनेक समा सकते है।

रावण वाली की बगल मे दबा हुआ है। उसका अभिमान वाली ने चूर चूर कर दिया। सूर्य के प्रचण्ड ताप से हिमालय का बर्फ जसे पिघलता है वैसे रावण का अभिमान पिघल गया। रावण को कैसी करारी पराजय? वाली ने रावण को दोनों सैन्य के बीच लाकर रख दिया। यह अपमान कम है? रावण नीची दृष्टि करके खडा रहा होगा? मुंह कैसा हो गया होगा? उस समय वाली ने रावण को कहा, 'हे रावण! वीतराग सर्वज्ञ अरिहत सिवाय मै कभी किसी को नही नमता। धिक्कार है तेरे अभिमान को! मेरा नमस्कार तुझे चाहिए था! तेरे अभिमान के कारण तेरी यह दशा हुई है। तेरे पूर्वोपकारो को यादकर तुझे मुक्त करता हूँ। जा, सारी पृथ्वी पर राज्य कर ...... ।'

वैश्रवण ने पराजित अवस्था मे आत्ममथन किया और वैराग्य के मार्ग पर आरूढ़ हुआ। विजयी अवस्था मे खड़ा हुआ वाली विचार करता है, 'यह रावण क्यो हारा? गगा की प्रवाह की तरफ उमड़ता हुआ वह आया था, फिर पराजित क्यो हुआ? उसके बाहुबल ने और उसकी विद्याओं ने उसे धोखा दिया।' जिसके बल पर विजय करने निकले हो वही खराब निकले तो? क्या दशा हो?'

किसके विश्वास पर दौडे जाते हो ? कम के विश्वास पर ? काल के विश्वास पर ? जगत के विश्वास पर ? किसके विश्वास पर हो ? बोलो तो सही ?

तीन का भरोसा न करो !

१ काल काल का विश्वास कदापि न करो । काल पर आपका काबू नही ! जिस पर अपना काबू न हो उस पर विश्वास नही किया जा सकता ।" अगले वप सघ निकालू गा, पाच वप बाद ब्रह्मचय व्रत लू गा, दस वप बाद दीक्षा लेनी है ऐसा सोचने वाले मनुष्य काल के विश्वास पर रहे और काल ने उनको अपना ग्रास बना लिया । जो सत्काय करना हो, वह आज ही और इसी क्षण कर लो ।
कवि ने कहा है—

'खबर नही या जग मे पल की ।'
सुकृत करना हो सो करले, कौन जाने कल की ?'

२ कम कम के विश्वास पर न रहो । कम धोखे बाज है । आज पुण्योदय है तो सब ठीक-ठीक चलेगा परन्तु कम आधी रात मे दगा देता है । तुम सो रहे होओगे और कम दगा दे देगा । पाकिस्तान से भागकर आये हुए एक भाई जयपुर मे मुझे मिले थे । वे किस तरह भागे, इसका उन्होने जो वणन किया, उसे सुनकर मेरी आखो मे आसू आ गये थे । आधी रात का सब साफ । जान बचाकर भागे । किसी के पुत्र छूट गये, किसी के मा बाप छूट गये किसी ने पत्नी को छोड दी । बस, जो हाथ मे आया, लेकर भागे । पुण्य कम के भरोसे न रहा । जहां तक पुण्योदय है, वहा तक उसका सदुपयोग कर लो ।

जगत्-जगत् के विश्वास पर न रहो। जगत् किसी का हुआ नही, होने का नही ? अरे, जगत् मे अपने शरीर का भी समावेश हो जाता है। सायकाल को आधा दर्जन रोटिया खिलाई, आधा किलो दूध पिलाया, डनलोप तकिया वाली शय्या पर सुलाया और प्रात. उठे कि शिकायत होती है कि 'शरीर जकडा गया है।' अरे। पर हुआ क्या ? आधा अग कैसे रह गया ? शरीर क्या कहता है ? मेरा नाम शरीर, मैं सदा विश्वासघाती, मुझ पर भरोसा रखकर मत चलो।' इसके विश्वास पर जो रहे उन्होने धोखा खाया। इस तरह धन-स्वजन और परिवार के विश्वास पर न रहो।

रावण विद्या-देवियो के वल पर, अपने वाहुवल पर विश्वास करता रहा तो पराजित हुआ। वाली ने उसे करारी हार दी। वाली को विचार आया कि 'आज जिस वल से मैंने रावण को पराजित किया, उसके विश्वास पर यदि मैं चला तो मेरी भी यही दशा हो सकती है। यह मेरी विजय कल पराजय मे वदल सकती है। अव तो ऐसी विजय प्राप्त करु कि फिर कभी पराजय का रोना न रोना पड़े।

वाली का दीक्षा-ग्रहण :

वाली ने अपने छोटे भाई सुग्रीव को वुलाया और कहा, 'इस वानर द्वीप का राज्य करना, रावण की आज्ञा मानना।'

सुग्रीव ने पूछा, 'वड़े भाई आप ?

वाली कहता है 'मै चारित्र मार्ग पर चलता हूँ।'

सुग्रीव बोला, 'क्यों ?'

वाली बोला, दीक्षा का माग अन्तरग शत्रुओ पर विजय प्राप्त करने का माग है।'

इस जगत् मे अन्तरग शत्रुओ पर विजय प्राप्त करने जैसा कोई अन्य पुरुषार्थ नही है। विजयी अवस्था मे वाली कसा विचार करता है ? अब तो वह लका का स्वामी बन गया है। वाली उस प्रसग को ज्ञानदृष्टि से देखता है। वाली सयम के मार्ग पर चल पडता है।

पराजित अवस्थामे दुखडा न रोओ और विजय के प्रसग मे उन्मत्त न बनो। उन्माद मे दुख है, पराजय मे दुख है। मानसिक दुख से अवश्य छुटकारा पाना चाहिए। प्रत्येक प्रसग का, प्रत्येक घटना का मूल्यांकन करने और उसको देखने की ज्ञानदृष्टि होनी चाहिए। इससे मन मस्ती मे रहता है। यदि दुख की कल्पना को बदलना आता है तो सदा सुख मे रह सकते हैं। इसके लिए आवश्यक है सत्सग और सद ग्रन्थो का वाचन।

ज्ञानदृष्टि उपसहार :

जीवन मे प्राप्त छोटी सी विजय या पराजय हमको हर्षित या दुखी बना देती है। इससे मन आतरौद्र ध्यान मे पडकर भयकर दुख पाता है उससे छुटकारा पाने के लिए ज्ञानदृष्टि प्राप्त करनी चाहिए, दिव्यदृष्टि का प्रकाश प्राप्त करना आवश्यक है। मन को ज्ञानदृष्टि से विचारने का अभ्यासी बना देना चाहिए। ऐसी अनेक ज्ञानदृष्टियाँ रामायण से प्राप्त होती हैं। रामायण का अध्ययन इस दृष्टिकोण से करना चाहिए। इस ज्ञानदृष्टि की महिमा बताते हुए पूज्य उपाध्याय यशोविजयजी ने कहा है —

मयूरी ज्ञानदृष्टिश्चेन् प्रसर्पति मनोवने ।
वेष्टन्ते भयसर्पाणा न तदानन्दचन्दने ॥

'मन-वन में यदि ज्ञानदृष्टि रूप मयूरी विचरण करती है तो इस मन-वन मे रहे हुए आनन्द रूपी चन्दन वृक्षों पर भय रूपी सर्प नही लिपट सकते ।'

ज्ञानदृष्टि : तत्वदृष्टि रूप मयूरी को मन वन मे विचरती रखो । बस, आनन्द ही आनन्द रहेगा । ऐसे परमानन्द के उपभोक्ता बनो, यही शुभ अभिलाषा ।

दि० १८-७-७१

चतुर्थ प्रवचन

करुणा .

अनन्त काल से इस भारत भूमि मे जीव-मात्र का हित चाहने वाले, कल्याण करने वाले, जीव सुखी कैसे हो, उनका कल्याण किस तरह हो ?' इसके लिए प्रयत्न करने वाले श्रेष्ठ महापुरुष हुए हैं। अपने जैन सिद्धान्तानुसार हम मानते हैं कि विगत अनन्तकाल मे अनन्त तीर्थंकर हुए हैं, वर्तमान मे महाविदेह क्षेत्र मे विचरते हैं और भविष्य में अनन्त तीर्थंकर होने वाले हैं। उन सबकी यह भावना है कि सब जीवो का परम कल्याण हो।' सब जीवो को सुखी करने की करुणा इस भारतवर्ष मे अनन्तकाल से चली आ रही है। इस कल्याणकारी भावना वाले अनन्त आत्माओ ने आत्मा का शुद्ध स्वरूप प्राप्त किया है।

विशुद्ध स्वरूप :

शाश्वत सुख, अक्षय सुख, परम सुख तब प्राप्त होता है जब हमारी आत्मा परमात्म-स्वरूप प्राप्त करने के लिए अपूर्व पुरुषार्थ करे। आत्म-स्वरूप की अभिव्यक्ति करनी चाहिए। अभी अपनी आत्मा परमात्म-स्वरूप मे नही है, अपना आत्मा का जो विशुद्ध मूल स्वरूप है, वह अभिव्यक्त नही है। वह कर्मो से आवृत्त है। परम सुख की ओर, शाश्वत सुख की तरफ जिसे गति करनी है, उसे आत्मा के शुद्ध स्वरूप को प्रकट करने के किए जागृत होना ही पड़ेगा।

सुख के लिए शुद्धि :

आत्मा की शुद्धि आवश्यक है, इसके बिना सुख नही। सुख अर्थात् ? जिस सुख की बात कर रहा हूँ वह सुख बाह्य पदार्थो से सम्बद्ध नही, वह भौतिक पदार्थो से सबंध नही रखता। मै तो ऐसे सुख की बात कर रहा हूँ जिसे हम स्वतंत्र रुप से भोग सकते हैं, जिसमे परतन्त्रता न हो।

'यदि मुझे कोई मधुर शब्द सुनावे, तो मै सुखी ? नही, यह तो बधन है ! 'अच्छा रूप देखने को मिले तो मुझे आनद ? नही, क्या इसके बिना आनन्द नहीं मिल सकता है ? 'सुगंध सूंघने को मिले तो मैं सुखी ?' नही, गध के बिना भी सुख का अनुभव हो सकता है।' मन पसद रस मिले तो ही सुखी ? ऐसा नही, यह तो पराधीनता है। परतन्त्रता मे सुख कहा ? मुलायम चमडी का स्पर्श मिले तो ही मैं सुखी ?' नही, स्वाधीनता के बिना सुख नही। ऐसा सुख पाने के लिए पुरुषार्थ करो जो सुख स्वाधीन हो।

निर्भयता सुख है

सुख वही है जिसके आने पर हम निभय बने ! आपको पूछे बिना नौकर चला जावे उस नौकर को आप रखेंगे क्या ? इच्छा से इरादा पूवक रखेग ? और आपन विवाह तो विचार करके ही किया होगा न ?

सभा—हमारा विवाह तो बचपन मे ही हो गया !

महाराज श्री—इससे क्या ? आपके बाप दादा ने तो विचार किया होगा न ? पहले माता पिता अपने पुत्र की चिन्ता करते कि मेरे पुत्र को सस्कारी कन्या परणाऊँ। 'आने वाली भाग न जाय, पूछे बिना चली न जाय ऐसी चिन्ता रख कर विचार करते थे न ? ऐसा सुख का क्या काम का जो पूछे बिना चला जाय ? निरन्तर परेशानी रहे ऐसा सुख नही चाहिए न ? विवाह के बाद यदि निरन्तर परेशानी महसूस होती हो त अच्छा लगे ?

सभा—परन्तु उससे कम छूटा जाय ?

महाराज श्री अहो ! मैं उपाय बताऊँ। छूटने की तयारी है न ? भयभरे सासारिक सुखो मे आपको चन नही। आप मग्न कर लेते हैं यह बात अलग है। जिस सुख मे आपकी रुचि नही, जो सुख भार रूप लगता है जिससे (Ten ion तनाव रहता है, वह सुख किस काम का ? हम ऐसे सुख के लिए प्रयत्न कर सकते है जिसके सान्निध्य म निभयता का अनुभव हो।

अनित्य सुखों से क्या ?

हमें ऐसा सुख पाना है, जो नित्य हो ! जो एक बार मिल जाने पर जाय नही ! जो सुख आकर चला जाता है वह तो

क्षेत्र मे तृप्ति मिल सकती है ? केवल एक धर्मक्षेत्र ही ऐसा है कि विचार करने से ही तृप्ति हो जाय !

सदाचार के विना सद्‌विचार लम्वे समय तक नही टिक सकते और सद्‌विचारों का आधार-स्तम्भ सदाचार है।

हिंसा की हड्डियां चाटते चाटते अहिंसा की भावना कहा तक और कैसे की जा सकती है ? सतत झूठ की प्रतिध्वनिया गूंजती हो वहां सत्य की भावना कहा तक टिक सकती है ?

अब्रह्म और दुराचार के वातावरण में रचा-पचा रहने वाला मनुष्य सदाचार एव ब्रह्मचर्य की वृत्ति कहां तक टिका सकता है ? परिग्रह के पहाड़ खड़े करने की उद्दाम प्रवृत्ति में अपरिग्रह वृत्ति कहा टिक सकती है ? सदा पाप-प्रवृत्तियो से जीवन तप रहा हो, वहा पुण्य वृत्तियो का कितना स्थान होता है, यह स्वस्थ चित्त से विचारना।

सद्‌वृत्ति सीखो :

इसी तरह सद्‌वृत्ति के विना सत्प्रवृत्ति चाहे जितनी करो तो भी क्या ? जीवो के प्रति दया और करुणा के भाव बिना अहिंसा की क्रियाएँ करे उसस क्या ? सत्य के पक्षपात विना माया भरा सत्य वोलने से क्या ? प्रामाणिकता का दंभ करे, वाहर से सदाचारी का दिखावा करे, अन्तर मे विपय-व सनाओ को पालता-पोषता हो तो ? ये सव प्रवृत्तिया निरर्थक वन जाती है यदि इनमे दुष्ट प्रवृत्तिया काम करती हों और सद्‌-वृत्तिया जागृत न हों तो ।

सभा - पाप प्रवृत्ति करते है, परन्तु हृदय मे चुभती है।

महाराज श्री—कौनसा काटा चुभता ह ? विलायती बबूल का या देशी बबूल का ? एक दिन भी इन पापो के बिना जाता है ? मन्दिर और उपाश्रय मे भी कषायो के पाप त्यागते हैं क्या ? कॉटा चुभता हो तो निकालने का कसा प्रयत्न करते हो ? नही निकाले तो कैसा दुख होता ह ? पाप चुभते हैं ? तो ऐसे मुँह नही हो सकते।

अजना •

इसके लिए आत्मनिरीक्षण की आवश्यकता है कि, हम कहाँ खडे हैं ? सद् विचार और सदाचार की कसौटी हो और उसमे खरे उतरे तब न ?

रामायण मे हनुमानजी को तो आप पहचानते हैं। इन हनुमानजी की माता का नाम 'अजना' था। इस महान् पुत्र को जन्म देने वाली माता मे सदाचार की वृत्ति और प्रवृत्ति-दोनो ही थी। यह महासती कसौटी पर खरी उतरी थी।

महेन्द्रपुर नगर के राजा महेन्द्र की वह इकलौती पुत्री थी। वह विद्याधरो की दुनिया थी। विद्याधर विद्या शक्ति वाले मानव थे। अपनी अपेक्षा विशिष्ट शक्ति वाले थे। अजना का सगपण प्रहलाद नगर के राजकुमार के साथ हुआ था। राजकुमार का नाम था पवनजय। सगपण होने के बाद पवनजय ने अपने मित्र प्रहसित को पूछा, हे मित्र तेने अजना को देखी है, ? हमेशा, सबध होने के बाद पहली इच्छा देखन की होती है।

सबध और जिज्ञासा

सबध होन के बाद पहली इच्छा दर्शन की होती है।

आपका किसी के साथ आध्यात्मिक सबंध हुआ है ? आपका सबंध आपकी आत्मा के साथ है क्या ? किसी महात्मा के साथ है क्या ? परमात्मा के साथ है क्या ? सबंध अर्थात् सगपण, लग्न नही। सबंध होने के बाद पहली जिज्ञासा दर्शन की होती है। मोक्ष मे जाने के बाद प्रथम दर्शन ! सकल चराचर विश्व के साथ ज्ञाता–ज्ञेय का सबंध ! ज्ञान और ज्ञानी का सबंध ! केवल ज्ञान मे सकल विश्व ज्ञेय और आत्मा ज्ञाता होता है।

सबंध होने के बाद पहला काम देखने का। सौदा होने के बाद माल देखने का मन होता है न ? जहा तक देखे नही वहा तक चैन नही पडता। आपका अरिहत के साथ संबध तो हो गया न ? आन्तरिक सबंध ? आत्मिक भूमिका पर सबंध हुआ है क्या ?

मित्रता :

पवनंजय का सगपण हुआ और उसे उत्कठा जागी कि, 'अजना कैसी होगी ?' पवनंजय और प्रहसित के बीच आदर्श मित्रता का सबंध था। मित्रता का आदर्श कौन से देश मे नही माना गया ? प्रत्येक ने माना है। मित्रता किसे कहना चाहिए ?' मेरा मित्र ऐसा होना चाहिए' यह मित्रता का आदर्श नही है परन्तु मै ऐसा मित्र बनू' यह मित्रता का आदर्श है। ! आदर्श अपने लिए होता है, दूसरो के लिये नही। अपने स्वय के आदर्श बनाये जा सकते है। आदर्श मित्रता देखनी हो तो पवन जय और प्रहसित की मित्रता देखो। पवनजय ने मित्र को पूछा, 'अजना कैसी है ?'

प्रहसित कहता है . 'मैंने जितनी कन्याएँ देखी है, उनमें अजना की तुलना मे आवे, ऐसी कोई नही है, तो किसकी उपमा

दू ? इसके जमी कोई हो तो उसकी उपमा दी जा सकती है। जो अनुपमेय ह उसकी क्या उपमा ? अब तुम धीरज रखो, केवल तीन दिन शेप हैं।

सगपण के तीन दिन बाद अजना का विवाह हुआ था। पवनजय ने कहा, 'एक क्षण का विलम्ब भी असह्य है।'

जिसकी प्रशसा सुनी हो उसे देखने के लिए कितनी अधीरता होती है ? सिद्ध भगवान् को देखने के लिए इतनी अधीरता होती है क्या ? आज प्रात काल सिद्ध भगवान् के वखाण (गुणगान) किये थे; उनको देखे बिना शायद आज आपको भोजन भाया न होगा !

सभा—आज तो अच्छी तरह जीमे !

महाराज श्री—तो क्या समझा जाय ? सिद्ध भगवत को दखन की उत्कठा क्या नही जागती ? उनके साथ कोई सबध नही हुआ क्या ?

जिसके साथ थोडा बहुत मीठा सबध हुआ तो, कोई उसकी प्रशसा करे तो उसे देखने लिए मिलने के लिए अधीर हो उठते है। अजना के साथ पवनजय का सबध हुआ। उसकी प्रशसा सुनी, अब तीन दिन तो क्या तीन घंटे भी निकलने कठिन हो गये !

प्रहसित कहता है, 'उसे देखने के लिए उसके घर जाना पडेगा।'

विवाह-पूर्व के मिलन-स्थान

उस समय सिनमाघर नही थे जहाँ मिलन का आयोजन

हो जाय। ऐसे [illegible] और कोई स्थान नहीं थे। आजकल तो न जाने क्या क्या [illegible] हुए हैं? [illegible] पता नहीं? अगर यह सब [illegible] तो [illegible] हो जावेगा। बम्बई में [illegible] कोई [illegible] तो अपने लड़की को स्वच्छन्दता [illegible] हुए भी मौन रहते हैं। नई पीढ़ी किस दिशा में जा रही है, इसका विचार करने का? सर्वथा विचार शून्य होकर क्यों आगे जा रहे हो? जागो, देखो और प्रबल पुरुषार्थ द्वारा अनिष्ट को रोको। रामायण का काल पुराना है, परन्तु स्नेह का संवेदन तो प्रत्येक काल में समान होता है। पवनजय को अपनी भावी पत्नी को देखने की उत्कंठा थी। वे विद्याधर थे। उनके पास विमान थे। वे विमान में बैठ गये और मानसरोवर के किनारे नवनिर्मित नगर में अंजना के सात मंजिले महल में पहुंच गये।

अंजना के महल में :

महल की अटारी पर अपने विमान उतारे। दोनों मित्र वहां उतर कर अंजना के खंड पर आते हैं। वहां अंजना की सखियां वार्ता-विनोद कर रही थी। अंजना को देखते ही पवनजय प्रसन्नता से झूम उठा, 'वास्तव में, प्रहसित ने जैसी प्रशंसा की थी वैसी ही है।' पवनजय को खूब आनन्द हुआ।

कोई व्यक्ति अच्छा लगता हो तो प्रथम उसे देखने की और फिर उसे सुनने की इच्छा होती है। अंजना की सखियाँ अंजना से मजाक करती है-

एक सखी : 'अंजना, तू कितनी भाग्यशालिनी है कि तुझे पवनजय जैसा पति मिला।

दूसरी सखी 'क्या भाग्यशालिनी ? पवनजय से तो विद्युत्प्रभ ज्यादा अच्छा है।'

पहली सखी 'वह तो चरमशरीरी है। लघुवय मे ही मोक्ष मे जाने वाले हैं। ऐसा अल्प आयु वाला पति अपनी सखी के लिए क्या काम का ?

विद्युत्प्रभ उसी भव मे मोक्ष जाने वाला था। वह चरम शरीरी था। 'अल्पायु मे मोक्ष जाने वाला हो तो दाम्पत्य जीवन किस काम का ? पति तो दीर्घायु वाला होना चाहिए।' सखी कहती है। पति कसा चाहिए। पसन्द करते हो न ? आपकी कन्या के लिए या अन्य के लिए वर पसन्द करना हो तो उसमे क्या देखोगे ? डिग्री देखग ? भज कलदार' देखेंगे ? आप देखें धनवान और लडका-लडकी देख रूपवान।

पति पूजीवादी चाहिए या साम्यवादी ?

एक बार नडियाद के एक कालेज मे जाने का प्रसग आया। ९०० से १००० की सख्या होगी। व्याख्यान मे मैंने पूछा 'तुम कसा पति पसन्द करोगी ? साम्यवादी या पूजीवादी ? ऐसा प्रश्न मुझे इसलिए करना पडा क्योंकि एक लडकी न खडी होकर कहा था कि 'देश मे साम्यवाद चाहिए।' इसलिए मैंने प्रश्न पूछा-पति कसा पसन्द करोगी ? साम्यवादी, पूजीवादी समाजवादी या अध्यात्मवादी ? कन्या लज्जित हो गई।

मैंने कहा 'कोई बात नही, घबराओ नही, कम से कम कितनी अपेक्षा रखती हो ?

एक न कहा रहने के लिए बगला, घूमने क लिए बेबी

कार हो, कार न हो तो स्कूटर तो चाहिए ही ।'

दूसरी ने कहा . 'कट्टर पन्थी (ऑरथोडोक्स) नही चाहिए, रूढिग्रस्त (बेकवर्ड) विचारो का नही होना चाहिए ।'

मैंने कहा : 'तुम कहो वैसा चले, ऐसा फारवर्ड पति चाहिए न ? (सभा मे हँसी की लहर फैल गई) इनको देश मे साम्यवाद चाहिए, घर मे पू जीवाद चाहिए । बगला, मोटर, रेडियो रेफ्रेजीरेटर, यह सब क्या है ? साम्यवाद के प्रतीक है या पू जीवाद के ?

इस देश मे ऐसी कितनी स्त्रिया है जिन्हे बगला वाले मोटर वाले पति मिले हो ? आप सब देखे, परन्तु एक बात देखना न भूले । वर या कन्या रूपवान और धनवान पसन्द करो परन्तु पहली बात वह गुणवान होना चाहिए । गुण रहित रूप और धन जीवन को बरबाद करते है । गुणो मे भी प्रथम गुण वफादारी का होना चाहिए । सदाचार के साथ वफादारी होनी चाहिए । तदुपरात गभीरता, सहिष्णुता उदारता आदि गुण भी होना चाहिए ।

पहली सखी दूसरी सखी से कहती है · 'विद्युत्प्रभ चाहे जितना अच्छा हो परन्तु है तो अल्पायु ! वह किस काम का ?

दूसरी सखी 'अमृत के दो बिन्दु भी अच्छे, विष के कटोरे क्या काम के ?'

इसका अर्थ समझे ? विद्युत्प्रभ अमृत के समान और पवनजय जहर के समान ।

पवनजय का हृदय-परिवर्तन •

सखिया उक्त रीति से बातचीत कर रही है, तब अजना कुछ नही बोलती है। यह भी एक मर्यादा है। पति के विषय मे सखिया परस्पर बात करती हो तब पत्नी क्या बोले !

पवनजय को लगा कि 'यह मेरी तुलना जहर के साथ करती है तो भी अजना कुछ बोलती नही। अजना चुप है। जरूर उसके हृदय मे विद्युत्प्रभ के लिए प्रेम होना चाहिए। मेरे साथ विवाह करना नही चाहती ह।

देखिये, सगपण के बाद दशन की उत्कठा जगी। दशन हुआ और प्रेम बढा। वार्तालाप सुनकर प्रेम उड गया। पवनजय का विचार हुआ कि 'अजना ने मेरा बचाव नही किया, यह चुप रही।' पवनजय ने कल्पना की कि 'यह अजना हृदय से विद्युत्प्रभ का चाहती है। उमक हृदय मे विद्युत्प्रभ बठा हुआ है। फिर उसक साथ विवाह क्यो करना चाहिए ?' रूप का राग चला गया। रूप देखकर किया हुआ राग दीघकाल तक टिक सकता है ? नही, दीघकाल तक नही टिक सकता। प्रेम करने का माध्यम रूप नही गुण है। गुण देखकर किया हुआ प्रेम दीघकाल तक टिकना है।

पवनजय कहता है, 'अजना के साथ विवाह नही करना।' कमर से तलवार निकाली और अजना के कक्ष मे जाने को तयार हुआ। प्रहमित चौक उठना है। पवनजय को पकडकर कहता है, हुआ क्या ? तू क्या बोलता है ? दानो राजाओ क बीच निणय हो चुका है। तू यह क्या करता है और क्यो इन्कार करता है ? तू मूख है। समान वय वाली सखिया परस्पर बातें करती हैं वह वाता-विनोद होता है उस पर ध्यान नही देना चाहिए।'

दूसरे का दृष्टिकोण समझो :

कई मनुष्य वात-वात मे उत्तेजित हो उठते है ! मजाक की वात को गभीरता से ली जाय तो अनर्थ हो जाता है। गंभीर वात को मजाक मे उड़ा दी जाय तो वात का मर्म समाप्त हो जाता है। जिस दृष्टि से, जिस प्रसग पर जो वात होती हो, उस दृष्टि से उस वात को समझना चाहिए। तभी योग्य न्याय किया जा सकता है। पवनजय ने विनोद की वात को गंभीरता से लिया और अजना के विषय में शका की।

प्रसंग पर मित्र को सच्ची वात समझाने की शक्ति अपने पास होनी चाहिए। यदि यह शक्ति अपने पास न हो तो मित्र-धर्म का निर्वाह नही किया जा सकता : एक सच्चे मित्र का कर्त्तव्य नही निभाया जा सकता। प्रहसित ने पवनजय को खूब समझाया। 'जो तू कहता है, वह नही चल सकता। तुझे विवाह करना होगा। तेरी वात सुनने को मैं विल्कुल तैयार नही। तुझे मेरी वात माननी होगी। अंजना के हृदय मे तेरा स्थान है। यदि वह सखियो के समक्ष तेरा पक्ष लेती तो सखियाँ कहती, 'वाह, अभी से पति-दीवानी हो गई। सखियों की वाते तू नहीं जानता है।

शारीरिक लग्न :

खूब समझाने के वाद पवनजय अजना के लग्न हुए। मानसरोवर के तीर पर लग्न हुए। लग्न होने क वाद अंजना को महल मे उतारा। वाद मे २२-२२ वर्ष तक पवनजय अंजना के महल की सीढ़ियां नही चढा। २२ वर्ष तक अजना का मुख नहीं देखा।

मुझे जो बात कहनी है, वह अब आती है। अजना के जीवन की यह पूव भूमिका है। अजना के हृदय मे पवनजय के लिए पूण प्रेम है, जबकि पवनजय के मन म अजना के प्रति घोर द्वेष है। अजना के सास ससुर की सहानुभूति अजना की तरफ हैं। अजना एक राजकुमारी है। विवाहित होकर वह एक युवराज की पत्नी और भावी राजरानी बनी है। अंजना को अपना कोई अपराध नजर नहीं आता। लग्न के बाद मेरे पति ने मेरा त्याग क्यो किया, यह प्रथम प्रश्न। जिसे मैं हृदय से चाहती हूँ, वह मेरी तरफ क्यो नही देखता है ? ऐसे सयोग मे जसे जैसे समय व्यतीत होता ह, वसे वसे नये प्रश्न पदा होते हैं। इस तरह झूर झूर कर जीवन पूरा करना है ? कहा तक प्रतीक्षा की जाय ?' इस परिस्थिति मे अजना की वृत्ति कितनी सदाचारमय रही है और प्रवृत्ति भी कितनी सदाचारमय रही है, यही देखने-विचारने योग्य है। यह कसौटी का समय है। सदाचार की वृत्ति और प्रवृत्ति का कसौटी काल है।

ऐसी विषम परिस्थिति मे भी अजना का मन पवनजय को छोडकर अन्य किसी पुरुष की तरफ नही जाता वह अन्य कोई विचार नही करती है। क्या बिगड गया है' ? मैं बँधी हुई नही हूँ ! चली जाऊ पीयर मे वहा पिताजी राजा है प्रसन्नकीर्ति जमा भाई है वह बहादुर है-जाकर बुला लाऊ।'

दु ख में दिव्य दृष्टिकोण

ऐसे रोष भरे विचार नही आये ! पति सुख के लिए अधीरता नहीं और तिरस्कार करने वाले पति के प्रति धिक्कार नही ! अजना ऐसे प्रसग मे अपने ही विपरीत भाग्य को दोष देती है। 'मेरे पापकर्मों का उदय है। मेरे कम ही ऐसे है इसमे

पवनजय का क्या दोष ? समता भाव से पापोदय को सहन कर लूँ । पाप कर्म दूर होगे और उनका मेरे प्रति सद्भाव जागृत होगा ।' यह थी अजना की ज्ञानदृष्टि ! सात्विक जीवन की दृष्टि !

यह दृष्टि अजना को कषायो की आग मे से बचा लेती है । क्या अजना ब्रह्मचर्य पालने के लिए विवाहित हुई थी ? नही, कामवृत्ति थी अत. विवाह किया, सासारिक जीवन के सुख की चाह थी अत विवाह किया था ··· · परन्तु इस कामवृत्ति-भोगवृत्ति पर सयम रखने की ज्ञानदृष्टि भी उसके पास थी ! यदि ज्ञानदृष्टि न हो तो कामवृत्ति या भोगवृत्ति पाप प्रवृत्ति की ओर ले जाये विना नही रह सकती ।

वंधन है अतः वधन चाहिए :

वासना है अत: सदाचार के वधन आवश्यक है ! वासना निर्मूल हो जाय फिर सदाचार के वधनों की कोई आवश्यकता नही है । शुद्ध-वुद्ध-निरजन स्वरूप आत्मा वनजाय तो वधनो की कोई जरूरत नही रहती । हम वधन मे है अत. वधन की जरूरत है । कर्म के वधन से मुक्त हो जाने पर धर्म के वधनो की आवश्यकता नही रह जाती । कर्म है अत. धर्म है । धर्म के वधन ज्ञानदृष्टि वाले जीव को कठोर नही लगते । ज्ञानदृष्टि वाला जीव सहजभाव से धर्म के वधनो को स्वीकार करता है । वह उनमे आकुलता का अनुभव नही करता ।

अजना विवाहित होकर आई है । पति के स्नेह की अभिलाषा उसके हृदय मे है । 'पति का स्नेह नही मिलता है अत. दूसरे का स्नेह प्राप्त करूँ' ऐसा विचार उसे नही आता । इसका नाम सदाचार-वृत्ति । 'दूसरी कोई शाक न मिले तो आलू खाने

की छूट ऐसी छूट भी कई मागते हैं ? ऐसी छूट ली जा सकती है ? क्या शाक के बिना कभी नही रहा जा सकता ?

वासना में न फँसो .

यदि शाक की वासना होगी तो उसके बिना काम नही चलेगा । किसी भी परपदार्थ की वासना बुरी है । वासना के वश मे न पडो । यदि विषय सुख की तीव्र वासना होगी और उसे तृप्त करने का पात्र पति या पत्नी न मिले तो वृत्ति पर-पुरुष या परस्त्री की तरफ दौडेगी जो कि अधम वृत्ति है ।

अजना वासना मे फँसी हुई स्त्री न थी । उसने अपने मनोमदिर मे पवनजय के सिवाय किसी अन्य का प्रवेश हो नही दिया था । प्रवेश कहा से हो ? दरवाजे खुले हो तब प्रवेश हो सकता है न ?

दर्शन-श्रवण-वाचन

अन्य विचारो के प्रवेश-स्थान तीन हैं दर्शन, श्रवण और वाचन । क्या देखते हो ? क्या सुनते हो ? क्या वाचते हो ? इन तीन के आधार से मनुष्य के विचार बनते हैं । आज आपके जो विचार हैं, वे आपके दर्शन श्रवण और वाचन के परिणाम हैं ।

दर्शन तुम क्या देखते हो ? आपको क्या देखना अच्छा लगता है ? आपके विचार इस दर्शन पर निर्भर हैं । यदि न देखने योग्य देखा करोगे तो तुम्हारे विचार भी न करने योग्य ही होंगे । आजकल न देखने योग्य को देखना ज्यादा बढ गया है । सही बात है न ? फिर खराब विचार कैसे रुक सकते हैं ?

श्रवण · आप क्या सुनते हैं ? आपको क्या सुनना अच्छा लगता है ? पर-निन्दा और आत्म प्रशंसा सुननी अच्छी लगती है न ? दुनिया भर के समाचार और सिनेमा के बीभत्स गायन ! किसी के झगडे और रगड़े ! फिर विचारो का भी रगडा ही होने का !

वाचन तुम क्या वाचते हो ? आपको क्या वाचना अच्छा लगता है ? न्यूजपेपर और सिनेमा मेगेजिन ? डिटेक्टिव कहानिया और सामाजिक बीभत्स उपन्यास ! हाँ, कदाचित कोई अच्छी पुस्तक भी पढते होओगे ? धार्मिक, और आध्यात्मिक साहित्य का वाचन कितने अंश मे ? फिर विचार कैसे सुधरेंगे ?

आज आप जो कुछ हैं, वह आपके दर्शन, श्रवण और वाचन का परिणाम है । इन तीन पर संयम रखना आता हो तो वृत्ति पर विजय प्राप्त की जा सकती है । अजना अपने महल के झरोखे मे खडी रहकर बाहर देखती भी नही ! अजना को पर-पुरुष को देखने की इच्छा ही जागी नही ! इच्छा जागे तो दबाने की आवश्यकता हो ! ऐसी इच्छा कब जागृत हो ? पवनजय पर स्नेह घटे तो ! परन्तु उसके हृदय मे पवनजय के लिए प्रेम घटा नहीं ।

आप जरा सोचिये, पति की तरफ से मनोवांछित सुख न मिले तो कितने दिन, कितने महीने...... ...... कितने वर्ष....... ... कितने घंटे....... ... कितने मिनट प्रेम टिक पाए ? यदि पत्नी इच्छित सुख न देती हो तो वह आपके मन मे कितने समय टिक पाए ? यदि आप केवल विषय-सुख के भिखारी होओगे और वैसा सुख यदि नही मिले तो आपके प्रेम पात्र का स्थान आपके हृदय मे नही होगा ।

अजना ने पति के विरह मे, हृदय म से पति को देश-निकाला नहीं दिया, जिससे पर पुरुष को देखन, की सुनने की या उसके माथ वाता-विनोद करने की इच्छा उसे नही हुई।

बहुत से लोग कहते हैं कि, 'बातें करने से क्या बिगड जाता है?' यह प्रश्न एकान्त मे अपन हृदय से पूछो। अन्तर-आत्मा को एकान्त मे पूछो। अन्तरात्मा जो उत्तर दे, उसे सुनो। अरे! ऐसी बातो से ही कई अप्रिय घटनाएँ सामन आई हैं और आ रही है।

व्यापक सडान •

वाचन अच्छा चाहिए। आजकल तो सदाचार-वृत्ति पर प्रहार करने वाला, कामवृत्ति को उत्तेजित करने वाला और मनुष्य को उद्दाम बना देने वाला साहित्य प्रचलित हो रहा है। वह कसे पढा जाता है यह आप जानते हैं?

उत्तर—नहा साहब!

महाराज श्री—सिर पर गोदडा ओढकर अन्दर टार्च लगाकर मेगेजिन के चित्र देखे जाते हैं और उन्हें पढा जाता हैं। बाहर तो परिवार और समाज का भय लगता है न? तुम्हारा समाज, तुम्हारी दुनिया कहा जा रही है? कितनी सडान है? उसे नष्ट करन का सत्व आपमे कहाँ है? कहा है आपम वह खुमारी? परिस्थिति किस सीमा तक बिगड चुकी है, यह सोचिए। वासनाओ का नग्न ताडव नृत्य चल रहा है। इन्द्रियो के द्वारा ऐसा देखना, सुनना और वाचना चालू हो तो कहा शील और कहा सदाचार? टके सेर भाजी टके सेर खाजा! भारत जैसी आर्य भूमि पर आज शील बेचा जाता है। जिस शील की

रक्षा के लिए रामायण का युद्ध हुआ। यदि सीताजी ने शील का आग्रह न रखा होता तो ? रावण सीताजी को हरण कर ले गया, सीताजी ने यदि रावण के सामने आत्म समर्पण कर दिया होता तो ? परन्तु नही। शील तो प्राण है ! जन्म जन्म का प्राण है। किसी भी कीमत पर इसकी रक्षा करनी चाहिए। आज शील की कीमत ? पाच रुपये ! एक दो सिनेमा की टिकिट। एकाध होटल की मेहमानी। आजकल अधिकाश मे शील और सदाचार की दृढता नष्ट हो चुकी है।

अजना के व्यक्तित्व को इस दृष्टि कोण मे देखो। पति के विरह मे भी उसकी शील-दृढता कैसी ? ऐसी माता ही वीर हनुमान को जन्म दे सकती है न ? शेष तो वानर पैदा होते है। हनुमान तो राजकुमार थे। वानर नही थे। जैन रामायणकार महर्षियो ने हनुमानजी को राजकुमार कहा है। वानर द्वीप पर रहने वाले वानर कहलाये। उस समय वानर द्वीप के घरो मे चित्र भी वानर के थे। आज ? आज कुत्तो के चित्र हैं न ? वानर द्वीप के घर की भीतो पर वानर के चित्र, ध्वज मे वानर, डिजाइन भी वानर को··· अत वहा के निवासी वानर कहलाये। इस इतिहास को न जानने वालों ने हनुमानजी के पूंछ लगाई। वानर बनाये !

सदाचार रक्षक प्रवृत्ति :

हनुमानजी की माता को पहचानते हो ? प्राय नही पहचानते ! हनुमानजी की माता अजना के पास कैसा व्यक्तित्व था ? कैसा सत्व था ? २२-२२ वर्ष तक जिसने उसका तिरस्कार किया उस पति को अपने हृदय मे विराजमान रखा ! आप अपने हृदय मे किसको विराजमान रखोगे ? आप तो वैरागी है अत.

पति या पत्नी को नही, परन्तु आपका तिरस्कार करने वाले गुरु को तो हृदय मे स्थान देते हो न ? प्रेम से ? आदर से ? स्नेह से ? जरा अपने हृदय को परखो तो !

२२ वर्ष के काल मे अजना की वृत्ति पवनजय को छोडकर अन्यत्र कही नही गई। परपुरुष का विचार तक न आया। इसी तरह उसकी प्रवृत्ति भी उसके शील के अनुकूल ही थी। २२ वर्ष मिष्टान्न नही खाया ! शृगार किया नही ! सुन्दर वस्त्र पहने नहीं मस्तक मे तेल डाला नही, 'बोब्ड हेयर' बनाये नही ! २२ वर्ष तक कोई विनोद-वार्ता नही ! २२ वर्ष मे पवनजय की शिकायत सास-ससुर से की नही ! यह जादू नही था। इसका विश्लेषण करो। आप कदाचित् कहोगे 'वह चौथा आरा था, अत अजना ऐसी पवित्र वृत्ति-प्रवृत्ति मे रह सकी।" यह बात नही है। चौथे आरे में भी नरक में जाने वाली स्त्रिया थी। चौथा आरा था अत अजना महान् सती थी, ऐसी बात नही।

उसकी सद्‌वृत्ति और सदाचार के पीछे कौन सा प्रेरक तत्व था ? उसकी सच्ची समझ ! उसके पास जीवन जीने की ज्ञानदृष्टि थी। सदविचार और सदाचार जीवन के प्रथम आदर्श हैं। इस आदर्श के लिए ही जीवन जीना है ! ऐसा आदर्श जीवन जीते हुए जो मिले उसी में सतोष मानना चाहिए। जो कष्ट आयें उन्हे सहना चाहिए ! मानव जीवन आदर्श हेतु जीने का जीवन है।

कौनसा आदर्श लेकर आप जी रहे हैं ? कोई आदर्श है भी ? किसी भी उच्च आदर्श के लिए जीवन जीओ। किसी सत्य का आग्रह रखिये चोरी न करने का आदर्श रखिये।

क्षमा-नम्रता का आदर्श रखिये। अजना ने २२ वर्ष तक अपनी वृत्तियो को शान्त रखी, अपनी इन्द्रियो को वश मे की।

पवनंजय की दृष्टि खुली :

एक वार पवनंजय युद्ध-यात्रा के लिए रवाना हुए। मानसरोवर पर पडाव डाला। सुहावनी सध्या थी। पवनजय संध्या की शोभा देख रहे थे। उन्होने चक्रवाक और चक्रवाकी के युगल को देखा। रात होने पर चक्रवाक चला जाता है। पति के विरह से चक्रवाकी कल्पान्त कर माथा पछाड़ती है! यह दृश्य देखकर पवनजय को विचार आया 'सारे दिन दोनों का मिलन रहा है और कल प्रातःकाल फिर दोनो का मिलन होने वाला है। तदपि एक रात्रि के विरह के लिए इतना क्रन्दन! तो अजना की दशा क्या होती होगी?' पवनंजय के विचार-प्रवाह ने २२ वर्ष वाद पलटा खाया। पहली बार अजना के प्रति सहानुभूति प्रकट हुई।

निमित्त तो मिलते है, परन्तु उन निमित्तों के अनुरूप विचार करना आना चाहिए। हाँ, उस समय दूसरा विचार भी आ सकता था कि, 'कैसी मूर्ख है चक्रवाकी। कल तो पति मिलने वाला है फिर इतना क्रन्दन क्यो?' ऐसा विचार करके भी आगे बढा जा सकता था। ससार के विविध प्रसगों को ज्ञानदृष्टि से देखने की कला प्राप्त कीजिये।

'मेरी अजना का क्या हुआ होगा?' पवनजय विचार करता है. २२-२२ वर्ष हुए, मैंने उसकी तरफ देखा तक नही! बस, अभी वापस जाता हूँ।' उसने अपने मित्र से कहा, 'अभी

ही अजना के पास जाता हूँ।' प्रहसित को आश्चय होता है। वह पवनजय को पूछता है क्या कहता है, तू तो युद्ध-यात्रा के लिए निकला है न ?

पवनजय हाँ, रात्रि को मिलकर फिर यहाँ आ जाऊगा।'

युद्धयात्रा के लिए जब पवनजय चला था तब अजना का तिरस्कार करके आगे बढा था। अजना को तब विचार हुआ कि मेरे पति युद्धयात्रा के लिए जा रहे हैं, उनके दर्शन तो कर लूँ। ऐसा विचार कर वह पति के चरण म मस्तक रख शुभ-कामना व्यक्त करती है। पवनजय उसको अवगणना तिरस्कार कर रथ को आगे बढाता है। अजना वहा बेहोश बन जाती है। यह सब याद आते ही पवनजय को विचार आता है कि अजना यह सब कसे सहन करती होगी ? अब तो अधिक सहन करने की शक्ति उसमे नहीं रही होगी ! हृदय जर्जरित हो गया होगा ! मैंने उसे लात मारी ! चल, मित्र ! विलम्ब न कर।' मित्र के सिवाय अपना दुख किसे कहा जाय ?

प्रहसित पवनजय को कहता है मित्र, लम्बे समय के बाद तुझे बडा सुन्दर विचार आय है, नहीं तो आज रात्रि को झूर झूर कर जरूर प्राण छोड देती उसे आश्वासन देने प्रिय वचनो स उसके हृदय को शान्ति देने के लिए तुझे अवश्य जाना चाहिए।'

मध्य मानसरोवर के किनारे है। दोनो मित्र चुपचाप विमान म अजना के महल में आते हैं। तब अजना और उसकी प्रिय सखी वसन्ततिलका का वार्तालाप सुनकर पवनजय का हृदय द्रवित हो उठता है।

अजना कहती है : 'हे वसंता ! स्वामीनाथ मेरा तिरस्कार कर चले गये, तो भी मै जीवित कैसे हूँ ? मेरा हृदय क्यो नहीं फट गया ? मृत्यु क्यों नही आई ?'

अंजना के उद्गार :

सर्वप्रथम प्रहसित अजना के कक्ष में प्रवेश करता है। अजना की दुखभरी शून्य चित्त वाली स्थिति देखकर उसका हृदय गद्गद् हो जाता है। इतने मे भयभीत बनी अजना बोल पड़ती है : अकस्मात्...... व्यन्तर की तरह यहाँ कौन आया है ? तू कौन है ? अथवा परपुरुष को जानने से क्या ? परनारी के घर से चला जा। वसता ! इस मनुष्य को पकड़कर बाहर निकाल ! मै इसे देखना भी नही चाहती। पवनजय सिवाय किसी दूसरे को यहां आने का अधिकार नही। तू क्या देख रही है ?

प्रहसित नमन कर कहता है . 'स्वामिनी की जय हो ! पवनजय क साथ आया हुआ मै उनका मित्र प्रहसित हूँ।'

अजना कहती है : 'मेरा दुर्भाग्य हँस रहा है ! तू मजाक करने आया है। यह समय विनोद का नही है। दुख के घाव पर नमक छिडक रहा है ! मेरे ही भाग्य का दोष है। मैं पापिनी हूँ।'

इतने मे तो पवनजय अजना के कक्ष मे आ जाता है। आँसू बरसाते हुए गद्गद् स्वर मे वह अजना को कहता है : 'मैंने तुझे मृत्यु के मुख मे धकेल दी।'

अजना पलग से नीचे उतर जाती है। पवनजय क्षमा मागता है। अजना उसे रोकती है और उसके पावों मे गिरकर

कहती है 'नाथ आप ऐसा न कहे, मैं तो सदैव आपको दासी हूँ। आपका कोई दोष नही है। मेरे ही पापकर्म उदय मे आये! आप जैसे सुशील और गुणवान् का क्या दोष? प्रहसित और वसततिलका वहा से चले जाते है।

२२ वर्ष बाद अजना को पति का सुख मिला। २२ वर्ष तक अजना शील और सदाचार की वृत्ति-प्रवृत्ति को सतत निभाती रही। जीवन जीने का दृष्टिकोण योग्य हो तो महान् जीवन जिया जा सकता है। महान् आदर्शो के माध्यम से जीवन जिया जा सकता है।

पवनजय के साथ एक रात्रि बिताकर अजना गर्भवती बनी। अजना ने कहा-'आपके चले जाने पर मेरी स्थिति विषम हो जायगी।' पवनजय अपनी अगूठी अजना को देता है और कहता है, युद्ध यात्रा से शीघ्र लौटूगा। मेरे यहा आने के प्रमाण स्वरूप यह अगूठी दे जाता हूँ।'

अजना कलकित

पवनजय जल्दी-जल्दी मे चला जाता है। इधर युद्ध लम्बा चला। पवनजय समय पर आ नहा सका। 'अजना गर्भवती बनी है' यह बात जाहिर हुई। सासू केतुमती ने कालिका का स्वरूप धारण किया। परिणाम यह हुआ कि उसने अजना को निकाल दी! आज दिन तक पवनजय के माता पिता को पवनजय की भूल मालूम होती थी, अब अजना की भूल मालूम पडती है और उसे निकाल देते हैं परन्तु वसततिलका उसका साथ नहीं छोडती है। वह सच्ची सखी थी। सखी नही

है जो सुख मे और दुख मे भी साथ दे। अजना पीहर जाती है। लोकैपणा का भूखा पिता महेन्द्र राजा कहता है, 'पिता की कीर्ति पर तू ने कलक लगाया ?'

आपको कौन प्रिय लगता है . लडकी या कीर्ति ? 'मेरी कन्या मेरी कन्या' करने वाला पिता महेन्द्र राजा कहता है कि, 'कुलागार ! तू यहा से चली जा।' अंजना माता-पिता के घर से निकल पडती है और जगल की ओर चल देती है।

दुःख का अन्त :

महासती अजना वसततिलका के साथ जगल मे भटकती हुई आगे बढ रही है। काटे और कंकर चुभते है, पावों से खून की धारा वह रही है। वसततिलका के सहारे भटकती-भटकती वह एक गुफा के पास आ पहुचती है। वहा एक महामुनि के दर्शन होते है। मुनि ध्यान की अवस्था मे थे। उन्हे वन्दना कर वसततिलका प्रश्न पूछती है . 'गुरुदेव, यह मेरी सखी कब तक दुख भोगेगी ? कौन पुण्यशाली जीव मेरी सखी के उदर मे आया है ?

मुनि ने कहा, 'तेरी सखी के दुख के दिन यही गुफा मे समाप्त होने वाले है। आने वाला पुण्यशाली जीव इसी भव में मोक्ष जाने वाला है।

हनुमान का जन्म उसी गुफा मे होता है। अजना गुफा के द्वार के पास बैठकर आँसू बहाती है और विचार करती है कि, 'यदि आज प्रह्लादपुर नगर मे पुत्र का जन्म हुआ होता तो कैसा उत्सव मनाया जाता ? आज यहा कौन ? इतने मे गुफा का

अधिष्ठाता देव प्रकट होता है, अजना को नमस्कार करता है। जिसका मन धम मे होता है उसे देव भी नमस्कार करते है। शील और सदाचार मे लीन अजना के चरण मे देव क्या न आवे ? देव प्रकट होता है !

उसी समय अजना के मामा प्रतिसूय विमान मे बठे हुए वहा से निकलते हैं। उन्होने गुफाद्वार पर बैठी हुई अजना का रुदन सुना। 'यह स्त्री क्यो रोती हैं ?' प्रतिसूर्य राजा ने विमान उतारा। आप मोटर मे जा रहे हो और कोई रोता हो तो मोटर रोकते हैं या स्पीड (गति) बढाते है ? एक्सीडेंट (दुर्घटना) हुआ हो और मनुष्य मरने की तयारी मे हो, सहायता मिले तो शायद बच जाय ऐसी स्थिति हो, तो आप उसे अस्पताल पहुचाएगे न ?

सभा 'पुलिस की परेशानी हो जाय।'

महाराज श्री बस ? पुलिस की परेशानी से बचना है भले ही वह व्यक्ति मरे ? मानव के जीवन की अपेक्षा आपको अपनी चिन्ता ज्यादा है ? यही मानवता है न ?

मामा विमान से नीचे उतर कर देखते है 'अजना ! तू यहा !' राजा प्रतिसूय वहा बठ जाते हैं। मामा को देखकर अजना फूट-फूट कर रोने लगी। दु ख के समय स्नेही के मिलने पर रुदन बढ जाता ह।

मामा कहते हैं 'अजना, तू चिता न कर। पुत्र को लेकर विमान मे बठ जा।'

मामा अजना को, वसततिलका को और अजना के पुत्र को हनुपुर ले जाते हैं।

उपसंहार :

जैसे हनुमानजी रामायण के एक पात्र है, वैसे ही उनकी माता अजना भी रामायण का अद्भुत प्रेरणादायी पात्र है। अजना के जीवन को यदि हम ज्ञानदृष्टि से देखे तो उसमे से जीवन जीने की दिव्य दृष्टि प्राप्त होती है। पापकर्म के उदय से प्राप्त दु खो के बीच मे वह शील सदाचार से विचलित न हुई ! कल्पना के कमरे मे अजना से भेट कर उसे पूछना कि, 'हे महासती ! इतने भीषण दु.खो के झझावात के बीच तुम ऐसा अपूर्व मनोबल किस प्रकार टिका सकी ? शील और सदाचार की ऐसी दृढ़ता कैसे प्राप्त की ? पूछोगे न ?

यदि पूछोगे तो आपको ऐसी जीवन दृष्टि प्राप्त होगी जो आपको निरन्तर प्रसन्न और पवित्र रखेगी। सदैव पवित्र और प्रसन्न रहे, यही शुभेच्छा-।

रविबार २५-७-७१ ।

पंचम प्रवचन

तत्त्व का मूल-प्रश्न

जब कोई मनुष्य अन्तमु ख बनकर कुछ विचार करता है तो उसे दो बातो का विचार आये बिना नही रहता ससार का और मोक्ष का। मै ससारी क्यो ? मेरा मोक्ष कब और कैसे होगा ? चिन्तन का प्रारभ प्रश्न से होता है। ऐसा क्यो ? फिर उसका चिन्तन चालू होता है। गौतम स्वामी के मन मे प्रश्न था आत्मा है ? भगवान् महावीर स्वामी ने उसका समाधान किया। इसमे चिन्तन विकसित हुआ। पश्चिम के देशो मे भी तत्वज्ञान का आरम्भ हुआ तो वह प्रश्न से ही। युनानी दर्शन का पिता 'थेल्स' समुद्र के किनारे रहता था। उसके मन मे प्रश्न था 'यह जगत् क्या है ? कैसे बना ? वह समुद्र के किनारे रहता था। उसके सामने पानी ही पानी था। समुद्र मे उसने अनेक जीवो को उत्पन्न होते हुए देखा, तो उसने जाना कि 'दुनिया की उत्पत्ति पानी मे हुई है।'

कहने का तात्पर्य यह है कि अन्तर मे जिज्ञासा होनी चाहिए, प्रश्न उत्पन्न होना चाहिए ! आपको ऐसा प्रश्न कभी होता है कि 'मैं ससारी क्यो ? मेरा मोक्ष कव होगा ?' ऐसा विचार अन्तर्मुख वने हुए व्यक्ति को ही होता है।

संसार और मोक्ष :

ससार और मोक्ष आत्मा से पृथक् तत्व नही है ! अपनी आत्मा ही ससार है और अपनी आत्मा ही मोक्ष ! इस दिशा मे चिन्तन करना चाहिए। अपनी आत्मा 'ससारी' कैसे ? हेमचन्द्र सूरिजी कहते हैं कि, 'कषाय और इन्द्रियो से विजित आत्मा ससार है और कषाय तथा इन्द्रियो पर विजय प्राप्त करने वाला आत्मा ही मोक्ष है !

आप किसके प्रभाव मे हैं ? आपके प्रभाव मे कोई है ? अपने प्रभाव मे जो होता है वह अपने कहने के अनुसार चलता है। है कोई आपके प्रभाव मे ? अपने प्रभाव मे जो होता है उसे आप कैसा नाच नचाते हैं ? आपको लगता है कि, मेरा कैसा प्रभाव है ? मेरे कहने के अनुसार करता है।' हम राग द्वेष के प्रभाव मे है। इसका मतलब यह है कि ये अपने को जैसे नचाते है वैसे अपन कठपुतली की तरह नाचते है।

क्रोध, मान, माया और लोभ-ये चार कषाय दो मे समाविष्ट हो जाते है। क्रोध और मान का समावेश द्वेष मे और माया तथा लोभ का समावेश राग मे होता है। मैं 'राग-द्वेष' शब्द का प्रयोग करुं तो आप उसका अर्थ चार कषाय से समझियेगा। रागद्वेष का आत्मा पर प्रभाव होना-इसी का नाम ससार है। इस प्रभाव से आत्मा का मुक्त होना ही मोक्ष है।

राग भयानक है

राग द्वेष मे मुक्त होना क्या कठिन लगता है ? हा, यह कठिन लगता है ! द्वेष तो खराब लगता है पर तु राग खराब नही लगता ! आप पर कोई राग करे तो आपको अच्छा लगता है ! प्यारा लगता है ! आप पर यदि कोई द्वेष करे तो अच्छा नही लगता ! आप किसी पर द्वेष करते है तो दूसरे की दृष्टि में खराब लगते हैं । ससार म प्रत्येक को ऐसा महसूस होता है कि 'राग तो आवश्यक है परन्तु याद रखिये कि राग का व्यसन भयकर है । राग जसा और काई दुखो करने वाला नही है । रामायण के पात्रो को दखिये ककेयी को भरत पर राग था, अत उसने भरत के लिए राज्य मागा । श्रीराम वन म चले गये ! वहा रावण की वहिन चन्द्रनखा को लक्ष्मण पर राग हुआ और सीता का हरण हुआ ! च द्रनखा का राग सीता क अपहरण का निमित्त बना ।

चन्द्रनखा

च द्रनखा का पुत्र साधना करने के लिए जगल म गया था । घनो झाडियो के बीच औंधे माथे लटक कर वह साधना करता था । घवराइये नही, मैं तो आपको सीधे बठाकर साधना कराऊगा । पालथी मारकर आराम मे शनि-रवि और सोमवार-तीन दिन साधना करनी है ।

यह 'सूयहास' खडग की साधना जसी कठिन साधना नही है । 'सूयहास' की साधना तो कई दिन भूखे रहकर करनी पडती है ! यहा तो आपको तीन दिन खीर के एकासन करने है, बिना दात वालो को भी कठिनाई नही पडगी ।

शम्बूक का वध :

चन्द्रनखा का पुत्र शम्बूक औंधे माथे लटका हुआ था, सूर्यहास खड्ग उसके पास आ गया था। इस वन मे रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी और सीताजी रहे हुए थे। लक्ष्मणजी जगल मे घूमते-घूमते इस झाडी के पास आ पहुचे। उन्होने वहाँ सूर्यहास खड्ग को आकाश मे लटकता देखा। अपूर्व शस्त्र को देखकर क्षत्रिय चुपचाप कैसे रह सकता है? लक्ष्मण ने खड्ग को पकडा। उनकी इच्छा प्रयोग करने की हुई। उन्होने वास की झाडी पर प्रयोग किया। उन्हे पता नही था कि वहा शम्बूक औंधे माथे लटक कर साधना कर रहा है। खड्ग को देखा तो वह खून से लथपथ था? और शम्बूक का कटा हुआ मस्तक भूमि पर पडा हुआ था। यह देखकर लक्ष्मण बोले, 'अरे! मेरे हाथ से कोई निरपराधी मारा गया है। लक्ष्मणजी शत्रुओ के सामने तो सिह जैसे और निरपराधी के लिए प्राण देने वाले थे। इससे उनके हृदय मे बहुत दु ख हुआ। वे अपने स्थान पर आये और रामचन्द्रजी से सारी बात कही।

चन्द्रनखा का रोष और राग:—

अपने पुत्र की साधना पूरी होने वाली थी, इसलिए चन्द्रनखा सूर्यहास खड्ग को बधाने और अपने पुत्र का सत्कार करने हेतु हाथ मे पूजा की थाली लेकर आई। आकर उसने क्या देखा? अपने पुत्र का वध! वह काँप उठी और रो पड़ी। 'हा वत्स शम्बूक! तू कहाँ चला गया?' परन्तु तत्क्षण उसे दूसरा विचार आया 'मैं कौन? रावण की बहिन। मेरे पुत्र का वध। किसने यह वध किया? लकापति के भानजे का वध? इस

प्रकार रोप से भरी हुई चन्द्रनखा नहा अनित पद चिन्हो के अनुसार लक्ष्मणजो के पास पहुची। वहा उसन राम और सीता को देखा। उसके हृदय मे वध करने वाले पर रोष और पुत्र की मृत्यु का शोक था। रोष और शोक से भरी हुई चन्द्रनखा रामचन्द्रजी को दखकर मुग्ध हो गई। विचार करिये भावो का परिवर्तन कितना विचित्र होता है? क्षणभर पहले भयकर रोष और शोक हृदय मे भरे हुए थे परन्तु रामचन्द्रजी को दखत ही रागभाव उत्पन्न हो जाता है। राग से उन्माद हो जाता है। वह भोग की याचना करती है। अभी उस बास की झाडी मे शम्बूक का मृत देह पडा है, पुत्र वध से व्याकुल बनी हुई वह माता शोक और आक्रन्द करती हुई वहा आई है, वध करने वाले को कठोर दण्ड दने की धुन मे आई है परन्तु राम को दखते ही वह मुग्ध हो जाती है रागी बन जाती है और भोग की प्रार्थना करती है। कर्मो की कैमी विचित्रता है? किन सयोगो मे चन्द्रनखा की कामवासना जागती है। वह कन्या का रूप बनाकर भोग की प्रार्थना करती है।

श्रीराम और लक्ष्मणजी उसकी माया को समझ लेते है, दोनो के मुख पर स्मित उभर जाता है। राम ने कहा—मेरे साथ म तो देख यह मेरी पत्नी है। यह लक्ष्मण अकेला है। वह लक्ष्मणजी पर मोहित हुई और उनसे बोली, मुझे स्वीकार करो।

लक्ष्मण ने कहा तू ने मन स एक बार आर्यपुत्र का वरण कर लिया अत मेरे योग्य नही। अत बात छोड।'

चन्द्रनखा क्रोध से तमतमा उठी उसका अह खण्डित हो गया।

राग मे से द्वेष जागता है। 'मै प्रेम करु और तुम प्रेम न करो, तो तुम मेरे शत्रु।'

चन्द्रनखा ने मन ही मन कहा : 'तुमने मेरा अपमान किया। तुम कौन ? जगल मे भटकते हुए भूत। तुम्हारे पास आकर कौन भोग याचना करे ? फिर भी तुम मुझे ठुकराते हो।

रोष से धमधमाती हुई वह पाताल लका पहुची। अपने पति खर विद्याधर को उकसा कर युद्ध के लिए राम के पास भेजकर वह लका चली गई।

सीता पर रावण का राग:–

अब पुत्र की मृत्यु का शोक नही परन्तु अपमान का रोष है। उसने रावण को ऐसा उकसाया, ऐसा उकसाया कि 'तू क्या लका का राजा बनकर बैठा है ? जहा तक तेरे अन्त पुर मे सीता नही वहा तक सब बेकार है।' वैर का बदला लेने के लिए उसने रावण को उकसाया और कहा, 'सीता को तूने देखी नही है, उसके जैसी सुन्दरी स्त्री दुनिया मे नही है।'

रावण को विचार आया कि 'जहा तक सीता प्राप्त न हो वहा तक चैन नही।' वह सीता का अपहरण करने गया। ऐसा क्यो हुआ ? एक स्त्री के राग के कारण। चन्द्रनखा को राम-लक्ष्मण पर राग हुआ। रावण को सीता पर राग हुआ। इस राग से युद्ध हुआ। सीता का अपहरण हुआ… लका का राज्य गया….रावण का वध हुआ। राग की कितनी भीषणता है अत. कोई राग न करे।' पर पुद्गल या पर-जन के प्रति राग हुआ कि अनर्थ की शुरुआत समझिये। बाह्य व्यवहार मे अन्त करण को निर्लेप रखिये। अन्त करण को राग से लिप्त न होने दीजिये।

राग से व्याकुल पवनजय

पवनजय को दुखी कौन कर रहा है ? राग ! युद्ध से वापस आने पर मालूम हुआ कि 'अजना को कलकित करके निकाल दी है ।' अब उसका क्रदन उसका दद नही देखा जाता । माता से कहा, 'तू ने यह क्या किया ? निष्कलक महासती जसी पुत्र वधू को निकाल दी ?

माता 'बेटा ! वह गभवती थी ।'

पवनजय 'मेरी अगूठी-निशानी नही बताई थी ?'

माता 'दिखाई थी ।'

पवनजय 'तो भी निकाल दी ?

पवनजय युद्ध से आया और सीधा अजना के महल म गया । पानी पीने के लिए भी नही रुका ! जिसके प्रति घोर तिरस्कार था उसके प्रति अब तीव्र राग है । मानसरोवर के किनार चक्रवाक के विरह मे चक्रवाकी की वेदना देखकर हृदय बदला था । युद्ध मे जाने से पहले एक रात वह अजना के पास आया था । वह युद्ध मे चला गया । युद्ध से लौटने मे विलम्ब हो गया । अजना गभवती थी । अजना की सासू ने उसे निकाल दी । पवनजय के हृदय मे अजना के लिए अपार राग है वह शीघ्र ही महेन्द्रपुर-सुसराल गया । वहा पूछा अजना आई थी ?' हा आई थी ।'

कहा है ?' उत्तर नही मिला । मालूम हुआ कि 'यहा से भी उस पतिव्रता को निकाल दिया गया है' ।

इसके वाद पवनजय वनो मे वहुत-वहुत भटकता रहा। प्रहसित एकमात्र उसका साथी था। वह केवल सुख मे ही नही दुख मे भी उसका साथी था। पवनजय ने उससे कहा,-'हे मित्र, तू चला जा, मेरे मातापिता को कहना कि 'महासती अजना को ढूढने के लिए तुम्हारा पुत्र वनो मे भटक रहा हैं, वह मिलेगी तो वापस लौट आवेगा, नही तो चिता में जल मरेगा।' जिस अजना को त्रास दिया था उसी अजना के लिए पवनजय वनो मे भटक रहा हे! मित्र के लिए समस्या खडी हो गई 'कि यदि मैं उसे छोड दूगा तो वह जल मरेगा और नगर मे जाऊ तो राजा की सहायता से कई विद्याधरो को सूचना देकर अजना की शोध करा सकेगा।'

प्रहसित भी दुखी :

अन्त मे एक दिन प्रहसित ने कहा कि 'मै जाता हूँ परन्तु तुझसे एक वचन मांग लेता हूँ कि 'तू कोई अयोग्य कदम नही उठावेगा।' इसके वाद प्रहसित पवनजय के पिता के पास पहुचा। वहा भी था करुण क्रन्दन।

जहा राग वहा दुख, अशान्ति, क्लेश और सताप ही होता है! जव राग से दुखी होता हुआ किसी को देखते है, तो रामायण के अनेक पात्र आखो के सामने आते है! पवनजय अजना पर राग से दुखी! प्रहसित पवनजय पर राग से दुखी!

चारो तरफ अजना की खोज शुरु हुई। तव पता चला कि, अजना को उसके मामा हनुपुर नगर ले गये है। वहा से अजना को लाने के लिए प्रहलाद राजा ने विद्याधरो को भेजा

राजा प्रह्लाद, रानी केतुमती आदि प्रहसित के साथ पवनजय क समाचार जानने के लिए रवाना हुए।

इधर पवनजय चलते-चलते घने जगल म पहुचा। भूतवन नाम का घना जगल था। उसमे मनुष्य का पता ही नही लगता था पवनजय 'अजना ! अजना ! की आवाज लगाता हुआ खूब भटकता है। जब अजना का विरह उससे अधिक सहा न गया तो वह चिता बनाकर, उसमे आग लगाकर उसके सामने खडा होकर क्षेत्र देवता को कहता है—हे क्षेत्र देवता ! मैं प्रह्लादपुर नगर का राजकुमार पवनजय हू। २२ वर्ष तक अजना ने मेरा विरह सहन किया। एक रात्रि को उससे मेरा मिलन हुआ। वह गर्भवती हुई। माता ने उसे कलकित मानकर निकाल दी। वह अजना यदि यहा आ पहुचे तो उसे कहना कि तेरा विरह सहन न होने से पवनजय चिता मे जल मरा है। ठीक उसी समय प्रहसित का विमान भूतवन पर चक्कर लगाता है। चिता की ज्वालाएँ ऊपर उठ रही हैं। जिससे ज्ञात होता है कि 'नीचे कुछ जल रहा है।' वह नीचे देखता है तो पवनजय चिता मे कूदने की तयारी करता है। प्रह्लाद राजा ने विमान नीचे उतारा और विमान से कूदकर पवनजय का बाहुपाश मे जकड लिया। पवनजय कहता है, मुझे कोई मत रोको, मुझे प्रायश्चित्त करने दो। मैंने अजना को दुख दिया उसका प्रायश्चित्त करने दो।'

अपार पीड़ा

अजना के मामा अजना के साथ विमान मे बठकर वहां आ पहुचते हैं। नन्हा सा हनुमान भी साथ है। पवनजय अजना को देखता है। सब का वहा मिलन हो जाता है। पुन भावा

का परिवर्तन ! राग से द्वेष हुआ, द्वेष से राग ! राग कितना भयकर है, इसकी कल्पना आती है ? राग की पीडा अपार है।

रावण का उज्ज्वल व्यक्तित्व :

रावण के अन्त पुर में कितनी रानियां थी ! हजारों रानियों के होने पर भी सीता का अपहरण करने की लोलुपता उसमे जगी। सीता पर राग हुआ ! सीता के स्पर्श के लिए तडफते हुए रावण की पीडा कितनी थी ? यह मदोदरी को पूछो। मदोदरी को रावण कहता है · 'जहा तक सीता का स्पर्श न मिले वहा तक यह जीवन व्यर्थ है।'

रावण लका का राजा था। लका का राज्य अर्थात तीन खड का विशाल राज्य ! रावण प्रतिवासुदेव था। वह बहुत प्रजा-वत्सल था। रावण को लका की जनता अन्त करण से चाहती थी। वह राक्षस नही था, राक्षस वश का था। जो रक्षा करे वह राक्षस ! राक्षस वश के राजा प्रजा के लिए मर मिटते थे। फिर प्रजा क्यो न चाहे ! आप इन्दिरा को चाहते हैं न ? आपके लिए उसने कितना कार्य किया ! आप सुखी बने इसलिए बेको का राष्ट्रीयकरण किया ! सविधान मे सशोधन किया ! आपको सुखी करने के लिए प्रजा के मूलभूत अधिकारों पर प्रहार किया ! इस प्रकार राष्ट्रीयकरण करते-करते आपका भी राष्ट्रीयकरण कर देगी ! ऐसी बेकार (बोगस) बाते रावण के राज्य मे न थी। 'रावण की राजनीति' अध्ययन करने योग्य विषय है। दुर्योधन की राजनीति भी अध्ययन करने योग्य है। ये रामायण-महाभारत के खल-पात्र है। तदपि इनकी भी विशेषताए थी। युधिष्ठिर के सामने जब दुर्योधन की राज्य-

व्यवस्था का वर्णन किया गया तो युधिष्ठिर भी आश्चर्य मे पड गये थे ! 'इतनी सुन्दर राज्य व्यवस्था !' युधिष्ठिर ने भी उसकी बहुत प्रशसा की थी।

आप संस्कृत पढे हैं ? युधिष्ठिर की राजनीति पढी है ? रावण की राजनीति जानते हैं ? हा, पठान की व्याज-नीति जरूर जानते होओगे !

रावण दुखी क्यों

रावण के पास क्या न था ? तदपि व्याकुल होकर पलग पर तडफता रहता है, बेचैन हैं, खाना पीना रुचता नही मदोदरी भी अच्छी नही लगती ! मदोदरी रावण की पटरानी और सौंदर्य से परिपूर्ण थी ! तदपि रावण का मन नही लगता था ! कारण ? सीता के प्रति उसका राग ! राग से पैदा हुई स्पृहा ! जिस पर राग जागता है उसे प्राप्त करने की इच्छा होती है। वह न मिले तो बेचैनी रहती है। राज्य से सुखी, शरीर से सुखी, वैभव सपत्ति से सुखी, रावण को क्या दुख उस समय ? है आपके पास समझने की दृष्टि ? आप जिन सुखो के पीछे दौड रहे है उनमे से उसके पास क्या नही था ?

सभा उसके सुख के सामने हमारा सुख तो कुछ नही है।

महाराज श्री उसके जैसा सुख मिल जाय तो ? थोडी बहुत समझदारी है वह भी बचेगी क्या ? ऐसी इच्छा मत करना।

अतृप्ति की आग •

क्या आप ऐसा समझते हैं कि बाह्य सुख के साधन आपको सुखी कर [illegible] ? ऐसी कल्पना यदि करते हो तो उस

कल्पना को उखाड फेंको। ससार के सुख साधन आपको सुखी नही कर सकते। सुखभोग से राग की आग नही बुझती। चाहे जितना ईधन आग में डालो, आग शान्त नही होगी, भडकेगी। एक कवि ने कहा है 'कि यदि समुद्र नदियो से तृप्त होता हो ईंधन मे आग शान्त होती हो तो विपयभोग से वासना शान्त हो सकती है।' क्या नदिया कभी समुद्र मे गिरने से रुकती है ? अनन्तकाल से नदिया ममुद्र मे गिर रही हैं परन्तु समुद्र कभी ऐमा नही कहता 'वस, अव मत गिरना।' एक कवि ने सागर नदी का सम्वन्ध पति पत्नी के सम्वन्ध जैसा गिना है। यह जीव ससार के पौद्गलिक सुख से कभी तृप्त होने वाला नही है। अग्नि को शान्त करना हो तो ईंधन डालना वन्द करना होगा। अग्नि को वुझाने के लिए स्त्रिया क्या करती है ? लकड़िया चूल्हे से वाहर निकालती है उन पर राख डालती हैं। राग की आग वुझाने के लिए विपय सुख का त्याग करना अनिवार्य है।

मंदोदरी संकट में :

रावण के अन्त पुर मे हजारों स्त्रियां थी तो भी रावण के राग को आग शान्त नही हुई। सीता के नही मिलने से वह तड़फता है। उसकी तडफडाहट को मदोदरी समझती है। आपति जानते हो ? हम भी जानते हैं। क्योंकि मदोदरी हमें मिली। कहाँ ? रामायण के ग्रन्थ में वह मिली। उसने समाचार कहे। वह तो इतनी विहवल हो गई थी कि उसने रावण मे कहा, 'आपकी शान्ति के लिए क्या करु ?''

तब निर्लज्ज रावण ने मदोदरी से कहा : 'मेरी शान्ति चाहती हो तो तू सीता को समझा।' दूती का काम रावण

किसे मापता है ? राग का नशा बेभान बना देता है। राग का प्याला पीया कि बुद्धि गायब ! राग के नशे मे आया कि मनुष्य बेभान हुआ ! गटर के कीड से भी खराब ! राग का नशा बहुत भयकर है। राग मे बेभान बनकर रावण मदोदरी जसी पतिव्रता स्त्री को क्या काम बताता है ? रावण कहता है, 'तू सीता को समझा।' मदोदरी हृदय पर पत्थर रखकर सीता के पास जाती है। सीता से बात करती है, 'तू मान जा मेरा पटरानी पद तुझे देने को तयार हू।' वह पटरानी पद का भोग देने को तयार होती है परतु उसका यह कदम अनुचित था। सीता ने कहा, 'तू यह क्या कह रही है ? सीता सिहनी की तरह गरज उठी, 'क्या दूतीपना करने आई है ? जैसी पति वसी तू ! चली जा यहा से !'

मदोदरी सीता के वचन से स्तब्ध बन गई। रावण भी उस समय देवरमण उद्यान मे आ पहुचा था। सीता के सिहनी के समान शब्द उसने सुने। वह काप उठा। यह सीता !'

राग का परिणाम :

राग की आग मे तडफता रावण अपने भाई विभीषण की सच्ची सलाह को ठोकर मारता है। रावण ने विभीषण से कहा 'और सब बात कर परतु सीता के विषय में सलाह मत दे।' आजकल कई लडके-लडकिया कहते हैं न कि, 'डैडी पप्पा हमारी पसनल बात मे कुछ न कह। यह तो हमारा पसनल मेटर है !'

राग क्या कराता है ? राग से ससार बढता है, तियञ्च का ससार बनता है, राग मे नरक का ससार बनता है ! राग

तो उपकारी माता पिता के भी ठोकर लगवाता है। राग प्राण से अधिक चाहने वाले पति की हत्या करवाता है।

जिस प्रदेशी राजा ने पिपासित सूर्यकान्ता रानी को अपना रक्त पिलाया था उसी पत्नी ने प्रदेशी राजा को उपवास के पारणे मे जहर पिलाया! इतना करके ही वह नही रही, कपट पूर्वक 'ओ स्वामीनाथ' कहती हुई उसके गले चिपट पडी ओर गला दवा दिया! ज्ञान की आँखे हो तो देख लो। राग की आग से वचाने वाले ज्ञान को उपादेय समझो। उस ज्ञान को हृदय से चाहो।

राग पागल कुत्ता है :

भारत के सव धर्मो ने राग-द्वेष के विरुद्ध आवाज वुलन्द की है। राग-द्वेष से वचे विना मोक्ष नही मिलता। द्वेष की अपेक्षा राग अधिक भयकर है। उसके लिए एक उपमा है। राग पागल कुत्ते के समान है। द्वेष भौकने वाले कुत्ते के समान है। भौकने वाला कुत्ता सिग्नल-सूचना देता है। लकड़ी हो तो तुम तैयार हो जाओ! लकडी न हो तो पत्थर! परन्तु वम्वई की सड़को पर तो पत्थर भी नही मिलते तव, क्या करोगे?

एक वार मुझे एक वड़े कुत्ते से पाला पड़ गया! हम लोनावला सेनेटोरियम मे थे। गाव मे गोचरी के लिए जा रहा था। रास्ता एक वगले मे होकर जाता था। मै उधर से जा रहा था। वहा एक पाला हुआ कुत्ता-सांकल से वधा हुआ नही-मुझे देखकर सामने आया। एकदम नजदीक आ गया। मैं तो एक दम वैठ गया। कुत्ता पूंछ फटकारने लगा। कुत्ते में अभिमान ज्यादा होता है। अभिमानी मर कर कुत्ता होता है! सचमुच!

यह मजाक नही है ! उसे लगा कि 'मैंने इसे कैसा बिठा दिया।' जब आप नम्र बनते हो तो अभिमानी सोचता है कि लोग इसी तरह सीधे होते है !'

वह कुत्ता भौंक रहा था कि, वहा उसका मालिक आ गया। उसने उसे पकडा और बाधा। मैं आगे बढ गया। चाहे जैसा कुत्ता हो, भौंकता हो तो सावधान हो सकते हैं। पागल कुत्ता तो पीछे से काटता है।

राग कब और कैसे चिपक जाता है, पता नही लगता ! राग हो गया फिर पागल कुत्ते की तरह पीडा ! फिर ? अनुभव नही ?

सभा—पागलपन आता है।

महाराज श्री—यह तो कहते हैं कि हडकाव (पागलपन) आता है।

सभा—साहब, आजकल तो प्रेम का हडकाव चला है !

हडकाव के जहर की वेदना जब चालू होती है तब प्रारभिक अवस्था मे सावधान होकर अस्पताल पहुच जाय तो शायद बच जाय, जहर चढ गया तो प्राण लेकर ही जावेगा। इसी तरह राग की वेदना शुरु होते ही वीतराग के चरणो की शरण मे चले जाओ तो बचाव हो जावेगा। वीतराग की शरण-गति स्वीकार की जाय तो राग का हडकाव दूर हो जाय।

राग का रूपक

रावण के प्राण सूख गये। विभीषण, मत्रीगण, प्रतिष्ठित नागरिक किसी की बात रावण नही मानता। 'तुम गडबड मत

करो, मै जो कुछ करता हूं वह ठीक है' ऐसा वह कहता था। इससे विभीषण को वहा से निकल जाना पडा। 'अन्याय के मार्ग पर मैं नही चल सकता' ऐसा सोचकर वह रामचन्द्रजो के पास जाता है। वहाॅ भी राग की होली थी! राम के हृदय मे सीता के प्रति तीव्र राग था। राग कैसा तीव्र है!

एक समय अशोक वाटिका (देवरमण उद्यान) में एक पुष्प पर सीताजी ने एक अचरज देखा। वहाॅ एक ईली थी और एक भँवरी थी। भँवरी का ध्यान करती करती इली भँवरी वनने लगी। यह दृश्य देखकर सीताजी उदास हो गई। रावण की एक दासी वहाॅ थी। वह चतुर थी। वह वोली, 'इतनी उदासी क्यो?

सीता-'यह ईली भँवरी का ध्यान करती करतो भँवरी वन गई तो मै राम का ध्यान करती करती राम हो जाऊँ तो?

दासी चतुर और हाजिरजवावी थी। वह वोली, 'कोई वात नही, राम सोता का ध्यान करते करते सीता वन जावेगे! यह है राग का रूपक!

रूपसेन सुनदा का ध्यान करते करते मरा। वह मरकर सुनदा के गर्भ मे पैदा हुआ। सुनदा राजकुमारी थी। रूपसेन के चित्त मे सुनदा रमी हुई थी। अकस्मात दीवाल धसी और रूपसेन मर गया। इसी समय एक चोर सुनदा के अन्तःपुर मे घुसा। अधेरे मे सुनंदा ने उसे रूपसेन माना। उसके संयोग से वह गर्भवती हुई। वहाॅ ये भाई साहव गर्भ मे उत्पन्न हुए!

रागी वनना है? राग करना ही है तो नवकार पर राग करो। अरिहत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु-इन

पंच परमेष्ठी पर रागी बनो। पंच परमेष्ठी पर रागी बनें कैसे ?

सभा—यह तो प्रशस्त राग है न ?

महाराज श्री—प्रशस्त राग करना है तो पंच परमेष्ठी पर करो। उन पर राग करना आवेगा ? उन पर राग करने के लिए पहले जिस पर राग है उस संसार के राग की चादर हटा लेनी पड़ेगी।

रावण का राग दूर हुआ

राग की दशा कहाँ तक दुःख देती है ? रावण को कितना पीड़ित किया ? युद्ध में सब पकड़े गये। पुत्र पकड़ाये मंत्री पकड़ाये सेनापति पकड़ाये। फिर संदेश भेजा गया 'सीता को सौंप दो' परन्तु उसने सीता नहीं सौंपी। रावण ने बहुरूपिणी विद्या साधी। अंतिम युद्ध में जाने से एक दिन पहले वह सीता से मिलने गया। उसने कहा, 'देख, कल अंतिम दिन है। युद्ध में राम और लक्ष्मण का वध करूंगा। तू नहीं मानेगी तो बलात्कार करूंगा। आज तक तो प्रतिज्ञा थी कि तेरी इच्छा बिना स्पर्श नहीं करूं परन्तु अब बलात्कार करूंगा।' यह सुनते ही सीताजी मूर्छित हो गई। जब होश आया तब वह बोली हे दुष्ट अधम ! मेरे पर बलात्कार करेगा ? मेरे प्राण रहित कलेवर को भले छू सकना। सीता के इस प्रहार को रावण झेल न सका। जिस सीता को मेरे प्रति तनिक भी राग नहीं उस सीता से मुझे क्या ? चाहे जितना प्रेम दूं तो भी सीता पर कोई असर नहीं होता, तो ऐसी सीता से क्या लाभ ?

रावण के राग का पूर्ण ह्रास

'वस, अव सीता नही चाहिए, परन्तु यदि अव सीता को राम को सौपने जाऊँ तो दुनिया कहेगी–'रावण झुक गया।' कल राम और लक्ष्मण को जीवित पकड़ूंगा।' रावण ने विचारा कि, 'कल उनको पकड लूंगा, यहाँ लाऊंगा और कहूँगा, यह तुम्हारी सीता ले जाओ।'

युद्ध मे जाने से पहले उसके विचार बदले। रौद्र ध्यान मे मरता है, वह नरक मे जाता है। नरक मे ले जाने वाले अनेक भाव है परन्तु मैं उन्हे नही वताऊंगा। मुझे आपको नरक मे नही भेजना है।

रावण और सीता के पूर्वभव :

जो राग के वन्धन से छूटा वह कितना सुखी ! जो राग से वचा वह द्वेष का नाश कर सकता है ! किसी पर राग न किया फिर भी द्वेष हो जाने का क्या कारण है ? पूर्वभवो मे द्वेष किया हो तो इस भव मे उसे देखते ही द्वेष हो आता है।

सीता को रावण के प्रति द्वेष क्यो था ? रावण को पूर्वभव से सीता के प्रति राग था ! पूर्वभव मे रावण शंभु राजा था। सीता पुरोहित की पुत्री वेगवती थी। वेगवती यौवन मे आई, रूप अद्भुत था। राजा ने उसे देखा और विवाह करने की इच्छा हुई। राजा ने पुरोहित से कहा, 'तेरी पुत्री का विवाह मेरे साथ कर दे।' वेगवती के हृदय मे शंभु के प्रति प्रेम नही था। वेगवती परम आर्हत धर्म की उपासिका थी, । शंभु अन्य-धर्मी था। वेगवती के पिता ने सोचा कि 'राजा अन्यधर्मी है उसे कन्या कैसे दूं ?' उसने इन्कार कर दिया। राजा अकुलाता है। क्या कहता है ? पुरोहित कहता है : 'नही परणा सकता।'

राजा — ऐसा ? तेरी कन्या पर तेरा अधिकार नही है। मैं राजा हूँ, मेरा अधिकार है।'

पुराहित की अनुपस्थिति मे राजा उसके घर वेगवती के पास पहुच गया और उसका शील भग किया। तब वेगवती ने शभु राजा पर थूक कर कहा, 'भवान्तर मे मैं तेरी मृत्यु का निमित्त बनूं। राजा घबराया उसने वेगवती को छोड दिया। उसने दीक्षा ले ली। वहा से देवलोक मे गई। वह वेगवती ही सीता बनी। शभु राजा रावण बना। रावण पर सीता को क्या घोर द्वेष है, यह समझ मे आया ? रावण को सीता पर राग है। भूतकाल मे किये गये कर्म जन्म जन्मान्तर मे साथ आते हैं।

रावण भयकर रूप वाला राक्षस नही था। वह गौरा गुलाबी विद्याधर राजा था। रूपवान और शौर्यवान था। हजारो विद्याधर कन्याएँ उस पर मुग्ध थी और उन्होंने उसका वरण किया था परन्तु सीता को एक क्षण के लिए भी रावण के प्रति राग नही हुआ। कारण ? पूर्वभव के सस्कार। आज जैसे अच्छे बुरे सस्कार डालोगे वैसे भवान्तर मे उदय मे आवेंगे। रागद्वेष के सस्कार डालोगे तो उनका परिणाम भयकर होगा ?

राग का दाग मिटाओ

सीताजी चारित्र का पालन करके देवलोक मे गई। परन्तु राग के सस्कार लेकर गई। श्रीराम के प्रति राग लेकर गई। बारहवें देवलोक मे इन्द्र बनी। वहा से अवधिज्ञान से देखा कि 'राम कहाँ हैं ? राग के सस्कार नहीं मिटे थे।

सब दाग रबर ... मिटते हैं क्या ? राग को मिटाने के

लिए रवर काम देगा क्या ? इसके लिए तो नेजाद लगाना पड़ता है ! आग भी लगानी पड़ती है ।

सभा : ऐसी स्याही आती है कि दाग बिलकुल मिट जाता है ।

महाराज श्री तो ऐसा कोई केमिकल (रसायन) ढूढो कि राग का दाग मिट जाय । राग के दाग को मिटाने के लिए परमात्मा जिनेश्वर देव ने अनेक प्रकार के केमिकल्स वताये है । सवसे श्रेष्ठ रसायन है-वीतराग परमात्मा की शरणागति । राग दशा को मिटाने के लिए वीतराग की उपासना ! वीतराग की आज्ञा की आराधना । इसके सिवाय दूसरा कोई उपाय नही है ।

सीता ने अवधिज्ञान मे देखा कि 'राम जगल मे ध्यान कर रहे हैं । धीर, वीर, पराक्रमी राम ध्यान लगाकर खड़े है । सीतेन्द्र विचारता है . श्रीराम ध्यान की धारा मे आगे वढकर घातिकर्मों का क्षय कर मोक्ष मे जाएगे ...फिर ? वे मेरे मित्रदेव नही वनेंगे, मुझे उनका सयोग नही मिलेगा ।'

श्रीराम को केवल ज्ञान :

सीताजी को विचार आया कि 'राम यदि मोक्ष मे चले जाते है तो मेरे राग का पात्र कौन ? केवलज्ञान की ओर वढते हुए राम को सीता का राग ब्रेक लगाना चाहता है । सीतेन्द्र नीचे आया । नाटक शुरु किया । राम का ध्यान तोडने के लिए सीतेन्द्र ने नृत्य शुरु किया । राम के मन को चलायमान करने के लिए सव कुछ किया . परन्तु राम शुक्लध्यान मे आगे वढते गये । केवलज्ञान प्रकट हुआ । वे ध्यानभ्रष्ट नही हुए । वे मानव थे

ये तीन राग के प्रवल निमित्त है। तीन दिन तक नवकार मत्र के ध्यान मे लीन रहना है। साढे वारह हजार नवकार गिनना है। हमेशा ४० नवकार वाली फेरना है। तीन वातों के राग से-भार-से- मुक्त होकर बैठ जाओ। नवकार मंत्र आपको गेरटी (खातिरी) देता है: 'सव्वपावप्पणासणो।' पच परमेष्ठि को सर्वस्व समर्पण करो। यह सव पापों का नाश करेगा। पाप नही रहेगे तो दु ख रहेगा? पाप गये कि दु:ख गये। पापो का नाश करने के लिए पच परमेष्ठी-अरिहत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु को भाव से और द्रव्य से नमस्कार करो। इनकी पहचान हो तो प्रीति हो। मैं इनका परिचय कराऊ गा। परमेष्ठी के साथ प्रीति का सम्बन्ध कायम करना है। साढे वारह हजार जाप कर सगाई पक्की कर लेनी है और लाख का जाप हो तो फिर... ....?

विधिपूर्वक लाख नवकार का जाप करके अभेद भावना का सवध स्थापित करना है। राग के प्रवल तत्त्व काया, कामिनी और कचन-से मुक्त होना है। केवल तीन दिन के लिए! टेम्परी (अस्थायी) मुक्त होना है! सर्वदा के लिए मुक्त होना हो तो कार्तिक पूर्णिमा के वाद!

राग से मुक्त होने के लिए वीतराग की शरण लो। राग के निमित्त का विसर्जन करो। इन दो वातो को समझ लेना है। ये ाते समझ मे आएगी तो प्रशस्त निमित्त का प्रभाव हो सकेगा। अस्ताचल पर अस्त होते हुए सूर्य को देखकर हनुमान को वैराग्य हुआ! जर्जर और कापते हुए नौकर को देखकर दशरथ महाराजा को वैराग्य हुआ। लक्ष्मण की मृत्यु से लव-कुश को वैराग्य हुआ। यह प्रभाव कब पड़ता है? राग द्वेष के पत्थर

आत्मा से दूर हुए हो तो और आत्मा जागत हुआ हो तब न !

वीतरागता का लक्ष्य :

राग के प्रबल निमित्तो से दूर होने का 'प्रयत्न करो। इसके लिए जीवन जीने की ज्ञानदृष्टि प्राप्त करो। 'राग के वशवर्ती न बनो' ऐसा रावण और पवनजय कह रहे है। राग दु ख की होली है। जीवन विरक्ति से जीओ, रागहीन जीवन जीओ। यह बात सीख लोगे तो सहज रीति से वीतराग के मार्ग पर तीव्रता से बढते हुए वीतराग बन जाओगे।

दि १-८-७१ रविवार।

छठा प्रवचन

मन से मानव :

समग्र जीवन सृष्टि मे मानव श्रेष्ठ है। जीवन देवों का भी है, जीवन तिर्यच का भी है और नारकी का भी जीवन है, परन्तु उन सब मे यदि कोई श्रेष्ठ जीवन है तो वह मानव जीवन है, इसकी श्रेष्ठता का कारण मानव का मन है। मानव को जैसा मन मिला ऐसा मन देवों को पास नही है, तिर्यचो के पास नही है, हाँ, इन्द्रियां तो सबको है! हमे इन्द्रिया प्राप्त हैं वैसी देवों, तिर्यचो और नारकियो को भी है परन्तु मानव को जैसा मन मिला है वसा अन्य को नही! मानव का मन अद्‌भुत कोटि का हैं। उसकी शक्ति अपार है, उसका कोई मूल्याकन नही हो सकता, उसका महत्त्व यदि समझ ले तो हमें दीनता या हताशा का कदापि अनुभव नही हो सकता।

मन 'चार्ज' कराइये

महामूल्यवान वस्तु सुरक्षित हो तो दूसरे दु ख तुच्छ लगते है। कदाचित् आपका बेग खो जाय, परन्तु तीन लाख का हीरा कमर में सुरक्षित हो तो कपडो का बैग गुम होने का दु ख नही होगा। हाँ आप जरूर कहेगे कि बग चला गया' परन्तु भावावेश मे आकर ऐसा नही कहेगे कि 'अब क्या होगा ? क्या करु गा ? क्याकि जो हीरा सुरक्षित है उसमे से एक नही इक्कीस बेग बसाये जा सकते है। ऐसा हीरा है हमारा मन ! वह यदि सुरक्षित है तो निराश होने की दुखी बनने की आवश्यकता नही। इस मन को थोडा चाज करने की आवश्यकता है। मोटर की बेटरी डिस्चाज हो गई हो तो चार्ज करानी पडती है न ?

प्रसन्नचन्द्र राजर्षि '

बेटरी डिस्चाज हो गई हो तो चाज करनी पडती है उसी तरह मन का मन्त्र से चाज करना सीख लो। महामन्त्र नवकार से यदि मन चाज हो जाय तो सीधे चौदह राजुलोक उपर सिद्धशिला पर पहुच जाए।

डिसचाज हुआ मन किसी समय ऐसा एक्सीडेट (दुघटना) कर डालता है कि पहुच जाओ सातवी नरक मे !

एक पाव पर खड रहकर तपश्चर्या करते हुए प्रसनचन्द्र राजर्षि का मन डिसचाज हुआ और वे सातवी नरक की तरफ चल पड ! परन्तु वे सावधान हो गय ! श्मशान मे खडे रहकर तप करते हुए ऋषि को मगध सम्राट श्रेणिक महाराजा ने

देखा था। उनको विचार आया कि यह तपस्वी जरूर देवलोक मे जावेगा।' उन्होने महावीर भगवान् से पूछा, 'प्रभो, यदि यह राजर्षि अभी कालधर्म को प्राप्त हो तो, कहाँ जावे ?

भगवान् ने कहा, 'श्रेणिक ! सातवी नरक मे जावे !'

श्रेणिक महाराजा तो स्तब्ध हो गये। उन्होंने फिर पूछा, प्रभो ! मै ऐसा पूछता हूँ कि 'यह प्रसन्नचन्द्र राजर्षि अभी काल-धर्म को प्राप्त हो तो कहाँ जावे ?

भगवान् : 'वैमानिक देवलोक मे !'

श्रेणिक ने कहा : क्या ? कहाँ जावे ? देवलोक मे ?

भगवान् का उत्तर बदल गया था ! तीसरी बार प्रश्न पूछता है, इतने मे तो देवदुन्दुभि बजने लगी। प्रसन्नचन्द्र राजर्षि को केवलज्ञान हो गया।

आपको बेटरी चार्ज करवानी है न ? बेटरी चार्ज करवानी हो तो चार्ज करने वाले को सौपनी पड़ती है न ?

महामंत्र नवकार :

मत्र से मन चार्ज होता है। ज्ञान से मन को समझाने की शक्ति भले आपके पास न हो, भले ऐसा ज्ञान आप न पा सके परन्तु महामत्र नवकार तो आपके पास है न ?

'णमो अरिहताण'-सात अक्षर का ध्यान, सात सागरोपम जितने नरक के दु.खो का, यदि आप धारे तो, 'नमो अरिहताण' के उच्चारण से नाश कर सकते है। महामत्र की शक्ति का

परिचय करने को आवश्यकता है। इसके लिए जीवन मे नवकार मत्र की विधि पूवक आराधना करनी चाहिए। विधि पूवक आराधना करने मे और नवकार गिनने म अतर है। विशुद्ध लक्ष्य स योग्य आसन पर, योग्य मुद्रा स दृढ सकल्प के साथ यदि नवकार मत्र की उपासना की जावे तो आत्मा विशुद्ध बनता है, उपद्रव शात होते हैं भूत पिशाच, डाकिनी, शाकिनी की बाधा नही हो सकती। नवकार मत्र के आराधक को कोई दवी उपद्रव हैरान नही कर सकता। श्री नवकार की आराधना मे नियमितता होनी चाहिए। जाप करने का समय नियत होना चाहिए। पूव मे या उत्तर की तरफ मुख रखकर बठना चाहिए। काल, दिशा, स्थान नियत करने चाहिए। कभी रसोई घर मे, कभी दीवानखाने म, कभी सोन के कमरे मे-इस तरह स्थान नही बदलने चाहिए। एक स्थान पर बठकर एक दिशा सम्मुख, एक समय मे एक ही प्रकार के वस्त्र धारणकर नवकार मत्र की आराधना करनी चाहिए। वस्त्र बार बार नही बदलने चाहिए। प्रतिदिन का एक ही ड्रेस होना चाहिए!

सामायिक के लिए धोती कमी रखते हैं? बताएगे? उतरी हुई! जिसे पहनकर बाजार मे नहीं जा सकें, सम्बधियो के यहां न जा सक, ऐसी धोती सामायिक के लिए! सच्चे आराधक हैं आप! नवकार का जाप करने के लिए शुद्ध वस्त्र चाहिए, अधोवस्त्र ता एकदम साफसुथरा होना चाहिए। माला भी एक सी होनी चाहिए। रोजरोज माला भी नही बदलनी चाहिए। प्लास्टिक की माला नही गिननी चाहिए। इस तरह जाप निरन्तर चालू रहना चाहिए। साधारण स विघ्नो के सामने झुकना नहीं चाहिए! आज तो सिर मे दद हैं आज तो घूमने-फिरने जाना है, कल सब कर लेगे ऐसी ढील नही

करनी चाहिए। सतत लक्ष्य-बद्ध होकर साधना करो। प्रतिदिन एक सौ आठ नवकार-इस तरह छह मास तक गिनो और फिर देखो उसकी शक्ति का चमत्कार !

पेथडशाह :

'सुकृत सागर' नामक प्राचीन ग्रन्थ मे लिखा है कि नवकार मत्र का एक-एक अक्षर अनेक देव-देवियो मे अधिष्ठित है। हमारा अहोभाग्य है कि जन्म से ही ऐसा अनमोल मत्र हमें मिला है। परन्तु दुर्भाग्य यह है कि हम उसका मूल्य नही समझते। नवकार मत्र की आराधना-उपासना मे धीरता वीरता चाहिए। तभी श्री नवकार की शक्ति का अनुभव जीवन मे हो सकता है, जीवन मे अभूतपूर्व आध्यात्मिक अनुभव हो सकता है।

मालवा से माडवगढ का राज्य था। वह अत्यन्त समृद्धि-शाली राज्य था, वहाँ का राजा श्रीराम था और उसका मत्री था पेथड़शाह। पेथड़शाह के पास सुवर्णसिद्धि थी। सुवर्णसिद्धि का अर्थ क्या ?

सभा—लोहे का सोना बन जाय !

महाराज श्री : कभी प्रयोग किया है ? लोहे का सोना बन जाय, परन्तु लोहा कैसा होना चाहिए ? उस लोहे पर कीट नही होना चाहिए ! बिल्कुल साफ होना चाहिए ! लोहे से सोना बनना है ? तो अपना कीट दूर करो। माया का, ममता का कीट चढ़ा है न ? जिनवाणी सुवर्ण रस के समान है। वह लोहे जैसी आत्मा को सुवर्ण बना सकती है।

पेथडशाह महापुरुष थे। बत्तीस वर्ष की भर जवानी में उन्होने ब्रह्मचर्य धारण किया था। वे परमात्मा जिनेश्वर देव

के पूजक थे। राज्य के महामंत्री थे। राज्य की खट पट तो आप जानते ही है। ऐसी परिस्थिति मे भी भगवन्त की पुष्पपूजा किस प्रकार से करते थे? परमात्मा के साथ एकतान!

वे मध्याह्न मे पूजा करने जाते थे। पुष्पों की आंगी करने मे ऐसे लीन हो जाते थे कि एक बार श्रीराम राजा मंदिर मे आये। उनको भी उन्हे खबर न पडी। पुष्प देने वाले को इशारे से हटाकर वहा स्वयं राजा बैठ जाते है। वे पेथडशाह को फूल दते जाते है और पेथडशाह भगवान को सजाते जाते है।

पुष्प पूजा किस तरह करते हो?

आपने भी अपने जीवन मे किसी को सजाया होगा न? ये वृद्ध तो जवाब नहीं देते हैं। युवकों को पूछ लू! यदि किसी को सजाया नहीं तो भगवान को सजाना नहीं आ सकता। भगवान् को सजाने के बाद ऐसा मालूम पडता है कि 'अब मेरे प्रभु कैसे अच्छे शोभा देते है।' कलर मेचिंग करना आता है? महिलाएँ ब्लाउज पीस खरीदने जाती हैं वहा कलर मेचिंग नहीं करती है! यहाँ तो अनघडपन!

कितनी ही धार्मिक क्रियाओं मे भी अविधि की जडें इतनी गहरी उतर गई हैं कि उन्हे किस प्रकार उखाडा जाय, यह समझ मे नहीं आता। भगवान के मस्तक पर मुकुट न हो तब कई लोग उनके मस्तक पर फूल रखते हैं। आप जब खुले सिर बाहर जाते हैं तो मस्तक पर फूल रखते हो? बाहर निकलो तब रखकर देखना! कैसे लगते हो?

महामत्री के कपडे वह नही ओढती तब तक उसे नींद नही आती ! देखिए कैसा है प्रेम !

पेथड़शाह और लीलावती पर कलंक :

राजा आये और देखा तो बात सत्य निकली ! राजा ने कुछ भी विचारे विना आज्ञा दे दी, 'लीलावती को देश निकाला दे दो।' यह समाचार पेथडशाह को मिले। उन्होने सारी परिस्थिति समझ ली। पद्मश्री को पश्चात्ताप हुआ कि 'मैंने निरर्थक ही कपड़े दिये, मेरे पति पर कलक लगा।'

पेथडशाह मे उदारता थी, सहिष्णुता थी और गंभीरता थी। वे महान् जिनभक्त थे, महान् ब्रह्मचारी थे। ऐसे महामत्री पर कितना भयकर कलक ?

पद्मश्री घोर रुदन करती है। पेथडशाह कहते हैं : 'तू मेरी चिन्ता क्यो करती है ? इस समय तो तुझे लीलावती की चिन्ता करनी चाहिए। यह है परमात्मा के भक्त का दृष्टिविन्दु।

'मेरी चिन्ता नही, पहले लीलावती की चिन्ता कर। ऐसे संकट के समय मन को स्थिर रखने की क्षमता शायद उसमे नही हो। मै अपने मन को स्वस्थ रख सकता हूँ। मै स्वयं पवित्र हूँ। दुनिया चाहे जो कहे। दुनिया के कहने से कलक नही लग जाता। यश और अपयश परिवर्तनशील है। यश के वाद अपयश और अपयश के वाद यश ! ससार में ऐसा ही होता रहता है ! एक कवि ने कहा.—

कब हो काजी, कव ही पाजी, कव ही हुआ अपभ्राजी ।
कव ही कीर्ति जग मे गाजी, सव पुद्गल की वाजी ॥

कभी तो न्याय के आसन पर बठावे और कभी नीचे जमीन पर पटक दे, कभी विश्व म झडा फहरावे और कभी धराशायी बना देवे ! *यह कम की बाजी है, पुदगल की धमाल है।'*

पेथडशाह का अपूर्व सत्त्व

महामन्त्री कहत हैं, 'तू मेरी चिन्ता न कर। तू लीलावती के पास जा। उस ले आ और अपने महल क भोयरे मे रख फिर सब कुछ ठीक हो जावेगा।

देखिये यह साहस ! जिसे राजा ने देश निकाला दिया उसे अपने महल के भोयरे मे रखने का साहस महामन्त्री करते हैं। लीलावती से पद्मश्री मिली। उसे सब बात कही। लीलावती बोली मेरे कारण महामन्त्री सकट मे पड और फिर उनके महल मे आऊँ ? नही, मुझे उनको अधिक सकट मे नही डालना है। मैं जगल मे चली जाऊगी।' लीलावती रो पडी, पद्मश्री भी रो पडी।

पद्मश्री ने बहुत आग्रह करके कहा, 'यह महामन्त्री की आज्ञा से कह रही हूँ। मेरे घर चलो।'

लीलावती को लाकर पद्मश्री अपन महल के भोयरे म रखती है।

लीलावती नवकार की शरण में

मन्त्री ने पद्मश्री से कहा 'लीलावती को कह दो कि भोयर मे नवकार का जाप करे। स्वस्थ चित्त से बठकर लाख नवकार गिने। प्रतिदिन दस माला, सौ दिन में जाप पूर्ण होगा।

यह भी कहो कि जहा तक जाप चले वहा तक एकासण करे। अन्य कोई विचार न करे।' यह वात पद्मश्री ने लीलावती को कही।

मंत्र का जाप करते समय कचरे जैसे विचार क्यो करने चाहिए ? ये विचार–विकल्प ही चित्त को अस्थिर और चचल वनाते हैं।

अशुभ विचारों को वाहर फेंक दो :

सभा . साहिव, विचार तो आ जाते हे।

महाराज श्री : क्यो आ जाते हैं ? यदि आते हैं तो उन विचारों को वाहर फेकने का प्रयत्न चालू करो।

सभा : किस प्रकार ?

महाराज श्री : मान-लो आपने एकासन किया है. प्रतिदिन वीडी पीने को आदत है। उसके विना चलता नही। दोपहर हुआ। विचार आया, 'वीडी के विना चैन नही पडता।' जसे ही विचार आया उसे वाहर फेक दो, प्रतिस्पर्धी विचार करके फेक दो . 'बीड़ी के व्यसन से मै तप–त्याग नही कर सकता। इस व्यसन पर प्रहार करने का मौका मिला एकासन द्वारा यह ठीक हुआ। अव सकल्प करु कि 'वीडी पीना ही नही।' ऐसा सकल्प करो। बीड़ी पीने का विचार ऐसा भाग जावेगा कि फिर सारे दिन तुमको हैरान नही कर सकेगा। परन्तु इसके लिए चाहिए सकलपवल !

दूसरी वात यह है कि अशुभ विचारो की परम्परा मत चलने दो। कुविचारो की पक्ति मत चलने दो। अधम विचारों

को परम्परा को तत्काल रोक दो। सकल्प करो। आकाश के तारे गिनने न यह नही बन सकता।

सभा यह तो किसी भी तरह नही होता।

महाराज श्री जरूर हो सकता है। सकल्प करो। अशुभ विचारो को बाहर फेंक दो। मारवाड के रेगिस्तान की तरफ देखो। बीकानेर प्रदेश मे देखा। ऐसी धूलभरी आधी आती है कि घर मे धूल का ढर लग जाता है। दिन मे पच्चीस बार घर साफ करना पडता है। जेठ महीने मे धूल का तूफान ज्यादा होता है। बार बार धूल उडकर आती है और बार बार उसे बाहर फेंक दिया जाता है। वसे ही विचारो के विषय म भी श्रान्त मत बनो। जसे ही कुविचार आया कि उसे शीघ्र बाहर फेंक दो। उसकी परम्परा मन चलने दो धारा न बहन दो।

खराब विचारो की परम्परा चलती है। मान लो कि आपने सिनेमा का एक बोर्ड पढा। वह सिनेमा जहा होगा, वह थियेटर याद आएगा। फिर वह दिन जब तुम वहा गये होओगे, याद आएगा। फिर कुछ लाल पीला दिखाई देगा और बहुत कुछ स्मृति मे ताजा हो उठेगा। इसलिए विचारो की ऐसी गाडी चलने लगे कि तत्काल ब्रेक लगाओ ताकि वह रुक जाय। अशुद्ध विचारो को रोकने वाला ब्रेक नवकार है।

सभा परतु बाहर कसे फेंके ?

महाराज श्री एक प्रयोग करो। अशुभ विचार आते ही तुम श्वास रोक दो और एक नवकार गिनो दो गिनो ... तीन गिनो। श्वास रोककर गिनो। यह प्रयोग छह मास तक किया करो। दुष्ट विचार आने लगे, ... जागे, इन्द्रिया

उत्तेजित हो तब श्वास रोक कर नवकार गिनो।

श्वास रोकने का मतलब श्वास को धीरे से अन्दर लेना और अन्दर ही रोकना, फिर नवकार गिनना, इसके बाद श्वास छोडना। यह ब्रेक है। आपको ब्रेक लगाना है तो कुछ सीखना तो पड़ेगा न ? या फिर बुद्धू के बुद्धू ही रहोगे ?

सभा : 'हाँ साहब !

महाराज श्री : 'क्या हाँ साहब ?'

दुःख शाश्वत नहीं :

अशुद्ध विचारों को रोकने का यह रचनात्मक तरीका है। पद्मश्री ने लीलावती से कहा, 'कोई अन्य विचार नही करना। विकल्प मन को अस्थिर, चचल और विह्वल बनाते है। उससे छुटकारा पाना है। बादल घिरते हैं वे बिखरने के लिए ! आज तक कोई बादल टिक कर नही रहा। घिरते हैं तो बिखरते है। बादल खूब घिरे हो तो बरस कर बिखर जाएगे। दु ख के बादल भी इसी तरह बिखर जाते है। कोई दु ख स्थिर नही रहता। चाहे जैसा दु ख हो वह शाश्वत नही रहता।

कलंक हटता है :

लीलावती को पद्मश्री ने कहा, श्रद्धा से नवकार मत्र का जाप करो।' लगभग ८० हजार नवकार पूरे हुए होगे कि नगर मे एक विचित्र घटना घटित हुई। सारे नगर मे हाहाकार मच गया राजा का पट्टहस्ती पागल हो गया। चारो तरफ घमासान मचाता हुआ वह नगर से बाहर गया। वहाँ, एक वृक्ष के

नीचे गिर पडा । उस वृक्ष मे रह हुए व्यतर ने हाथी के शरीर मे प्रवेश किया था । राजा वहा गया, नगर के लोग भी पहुचे । हाथी राजा को बहुत प्रिय था । अरे, इसे क्या हो गया ? अर काई उपाय करो इस बचाओ !' दवादारू, मत्र यत्र सब किय कोई फर्क नही पडा । व्यतर हठीला था । वह किसी भा तरह नही निकल रहा था । ऐमा प्रसग देखकर लीलावती को दासा ने मौका साधा । उसे विचार आया कि 'यह अच्छा अवसर है !' वह दौड कर राजा के पास पहुची और बोली 'आप मुझे अभयदान दो तो मैं एक बात कहूँ ।'

डूबता मनुष्य तिनके को भी पकडता है । दुख म पडा हुआ व्यक्ति बालक की भी सलाह लेता है ।

राजा ने 'हाँ' कहा । दासी बोली 'पथडशाह का वस्त्र हाथी को ओढाओ ।'

राजा ने सोचा यह उस वस्त्र की बात करती है जिसे लीलावती ने ओढा था । क्या उस वस्त्र मे ऐसी शक्ति है ? राजा ने कहा 'वह वस्त्र ले आ !'

'महान् भक्त, महान् श्रावक पेथडशाह का वस्त्र ओढ़ाया जाय तो व्यतर जरूर चला जावेगा' एसा विचार कर दासी शीघ्र दौडकर पेथडशाह के महल म आई ।

पद्मश्री ने कहा 'क्या बात है ?'

दासी बोली 'महामत्री की पूजा की जोड दीजिय ।'

पद्मश्री ने कहा 'क्या करना है ।'

दासी ने सब बात कह दी। पद्मश्री ने कहा : 'एक तो होली जल रही है, दूसरी और जलानी है ?

दासी ने कहा 'अरे, अभी दुख के दारुण विखरने ही वाले है। दासी वह वस्त्र लेकर दौडती हुई राजा के पास आई।

पद्मश्री विचार करती है कि ,यह वस्त्र हथी को ओढाया जाएगा, व्यन्तर की पीडा दूर होगी, तो जिस वस्त्र से रानी कलकित हुई है वह निर्दोष महासती सिद्ध होगी।' वह भोयरे मे गई और लीलावती से कहा 'कलक मिटा समझो।'

लीलावती ने पूछा : कैसे ?'

पद्मश्री ने कहा : 'आधे घन्टे मे वरघोडा आया समझो।'

लाख नवकार का विधिपूर्वक जाप करने से नरक के दुख दूर होते हैं, यह तो अल्पकालीन दुःख है। इसके दूर होने मे क्या देर ? पद्मश्री ने लीलावती को सब बात कह दी।

दासी हाथी के पास पहुची। राजा अन्यमनस्क होकर खड़ा है। देखिये, पशु पर कितना प्रेम है ! आज ऐसे भी मनुष्य हैं जिन्हे अपने पुत्रो को अपेक्षा पालतू कुत्तो पर ज्यादा प्रेम है।

दासी ने कहा . 'यह वस्त्र ओढ़ाइये।'

राजा को मन से तो महामंत्री के प्रति घृणा है। वही है यह वस्त्र जिसे मेरी रानी ने ओढा था······। इसका ऐसा चमत्कार हो सकता है ?

आध्यात्मिक शक्ति :

धर्म शक्ति, तप शक्ति और आध्यात्मिक शक्ति ऐसी है

कि इसका आनन्द वही ले सकता है जो इस क्षेत्र मे हो। माहि पड्या ते महासुख माणे देखण हारा दाझे रे–' आध्यात्मिक शक्ति, मन्त्र शक्ति...... आदि को अनुभवी ही जान सकते हैं। चर्चा या विचार से इसका वास्तविक बोध नही होता।

राजा ने वह वस्त्र ओढाया। दासी का हृदय धड़क रहा होगा न?

सभा 'हाँ'।'

परन्तु किस कारण से? अश्रद्धा से नही। उत्कंठा थी। उसे विश्वास था धर्म की शक्ति पर। धर्म की शक्ति महान है। धर्म से मर्म को बलवान मत मानो। नही तो धर्म के प्रति अश्रद्धालु बन जाओगे।

दो–चार मिनिट हुए कि उस हाथी के शरीर में कम्पन हुआ। वह हिला और शरीर को झुलाता-झुलाता खड़ा हो गया। लोगो ने हर्षध्वनि की। हजारो नागरिक वहाँ थे। वे जय-जयकार करते हैं। किसकी? पयटशाह की।

राजा दासी को देख रहा है, दासी हाथी को देख रही है और हाथी पयटशाह की हथेली की तरफ नजर डाल रहा होगा।

दासी ने शीघ्रता से जाकर पेथडशाह को समाचार दिये, 'पधारिये, आपका प्रभाव देखिये, हजारो नागरिक आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

पानी पुरुष का मन पर भी कुछ नही होता। पयटशाह जानते थे कि राज्य में बिना काम नही जाना।' पूर्वभव में मैंने

किसी को कलंकित किया होगा······इसके विना ऐसा नही हो सकता।' उनके पास ज्ञान था। उनके मन मे राजा के प्रति रोप नही था। वे कपड़े पहिन कर शीघ्र वहाँ आ गये।

धर्मो रक्षति रक्षित :

पेथड़शाह आये। राजा ने उन्हे हृदय से लगाया राजा क्षमा मागने लगता है, इतने मे पेथडशाह उनका हाथ पकड लेते है और कहते हैं : 'महाराजा, आप तो मालिक है।'

राजा : 'मैं मालिक नही, मैं आपको पहचान न पाया। ऐसा अद्भुत चारित्र्य ! तुम्हारे वस्त्र मे ऐसा प्रभाव कि व्यन्तर का उपद्रव दूर हो जाय ! मैंने मिथ्या शका की। लीलावती ने यह वस्त्र ओढ़ा और मैंने शका की······उसे देश निकाला दिया······वह कहाँ होगी ? वह जीवित होगी या नही ?

पेथड़शाह ने कहा : 'धर्मो रक्षति रक्षित.। लीलावती के हृदय मे धर्म होगा तो वह अवश्य उसकी रक्षा करेगा।'

आप कहेगे कि 'यह संसार अच्छा नही है, स्वार्थ के सव सगे है··· ···क्या करे ? अपने कर्म भारी है··· ···ऐसे रोने रोते हो न ? परन्तु रोते क्यो हो ? रोने के बदले हृदय में धर्म को स्थान क्यो नही देते ? क्या धर्म निर्बल तत्व है ? धर्म की शक्ति अनन्त है, अपार है। यदि वह धर्म हृदय मे है तो चिन्ता करने की आवश्यकता नही। 'मेरा धर्म मेरे पास है, यही धर्म मेरी रक्षा करेगा' यह आत्म विश्वास पैदा करो।

उस। हाथो पर अबाड़ी रखी गई। राजा और पेथडशाह

उमम वठकर राजमहल आय। राजा पेथडशाह का कहता है 'चाहे जा करो, परन्तु लीलावती की खोज करो।

पथडशाह कहते,हैं 'महाराजन् ! मुझ विश्वास है कि वह मिलेगी। वहीं म भी मिलेगी।

समय पकने पर लीलावती का प्रकट किया गया। हाथी पर रानी को उठाकर नगर म फिरा कर राजमहल म ले जाया गया। मारट दूर हूए। यश कीर्ति फल गई।

रामायण में भी नवकार

रामायण मे भी ऐसी ही एक बात आती है लका म तडितकश' नाम का राजा था। उस समय राक्षस द्वीप और वानर द्वीप के बीच मित्रता थी। मित्रता ऐसी थी कि एक दूसरे के राज्य म आने-जाने की पूरी स्वतन्त्रता थी।

वानर द्वीप पर बहुत स वानर रहते थे। वानर बड सुदर, और रमणीय थे। किसी मनुष्य का नहीं सताते थे।

एक बार तडितकश राजा अपनी रानी चन्द्रा के साथ वानर द्वीप के उद्यान म क्रीडा करने गया। सनिका का द्वार पर खड़े कर दिये। जिस बगीचे म राजा-रानी क्रीडा करते हो उसम किसी दूसरे का प्रवश नहीं हो सकता।

उस बगीचे में वृक्ष थे। वृक्षो पर वानर थे। चन्द्रा रानी एक वृक्ष के सहारे बठी थी। तडितकश राजा उद्यान में घूम रहे थ। इतने म वृक्ष पर बठा हुआ एक वानर नीचे उतरता है और चन्द्रा रानी पर हमला करता है। वानर न रानी के शरीर

को खूरा, कपडे फाड़ डाले, छाती पर प्रहार किया। रानी चिल्लाई दौडो, दौडो। राजा दौडकर आया। वह यह दृश्य देखकर काप उठा। गजब हो गया। वानर ने रानी पर हमला किया!

मुनिवर वानर को नवकार देते हैं:

राजा ने धनुप पर वाण चढाकर वानर पर छोडा। तीर वानर के पेट मे चुभ गया। पेट मे घुसे हुए तीर के साथ वानर भागने लगा। खून की धारा वह रही थी। थोडी दूर जाते ही वह गिर पडा। जिस दिशा मे वह वानर दौड़ा था, वहाँ एक मुनि ध्यानस्थ दशा मे खड़े थे। उन्होने उस वानर को देखा। ध्यान पूर्ण कर वे वानर के पास पहुचे। नीचे बैठकर उस वानर के कान मे नवकार मत्र सुनाया। मरते पशु को नवकार मत्र सुनाया। नवकार की ध्वनि के प्रभाव से वह वानर मरकर देवलोक मे देव हुआ।

वानर को नवकार के अर्थ का ज्ञान नही था। परन्तु मत्र के अर्थ का ज्ञान होना आवश्यक नही है। शब्द मे शक्ति है। शब्द-शक्ति अर्थज्ञान की अपेक्षा नही रखती।

सभा—नवकार गिनते-गिनते बीच मे कोई मोह माया आ जावे तो नवकार का लाभ मिलता है क्या?

उस वानर को मोह ममता ने बाधा नही दी, तो मनुष्य को मोहमाया क्यो बाधा दे? वानर को महामुनि नवकार सुनाते है, उसमे उसका मन लग जाता है और वह स्वर्ग मे देव बन जाता है। तो आप ? पशु से कम तो नही न? उस मरते

हुए वानर ने ध्यान पूर्वक नवकार सुना। मोह उसमें बाधक नहीं हुआ।

मोह-ममता को पराजित करने की शक्ति नवकार मंत्र में है। मोह के साथ लड़ने की शक्ति मंत्र देगा। मरते समय परिवार वाले नवकार सुनावें, दूसरी बातें न सुनावें, ऐसा आपका परिवार है न? यदि ऐसा परिवार न हो तो आओ हमारे पास!

मरते समय नवकार, पहले क्यों नहीं?

एक समय एक गाँव में मैं मरणशय्या पर पड़े हुए व्यक्ति को नवकार सुनाने गया। मरते समय हमको बुलाया जाता है, पहले नहीं! उसकी पत्नी धार्मिक थी। वह आई और बोली, साहब, अंतिम स्थिति है, कुछ सुनाइए।' मैं गया तो उस व्यक्ति ने भीत की तरफ मुँह फेर लिया! मैंने कहा, 'कान में शब्द जाएंगे तो कोई डाल लो' तब कहीं मुँह फेरा और मेरी तरफ देखा। उसे साधु के दर्शन भी अच्छे नहीं लगे! मैंने कहा, 'सारी जिन्दगी पाप में बिताई अब मरने समय भी नवकार मंत्र सुनने की इच्छा नहीं होती? कहाँ जाओगे? ऐसा जब कहा तब बोले, सुनाइए, साहब' मैंने नवकार मंत्र सुनाया!

नवकार से वानर देव हुआ

वह वानर देवलोक में गया। अवधिज्ञान से देखा कि, 'मैं कहाँ से आया?' उसने भूतकाल देखा। वानरद्वीप, वहाँ बगीचा, अपना खून से लथपथ कलेवर, पट में तीर, पास में खड़े हुए मुनिराज! अहा! उनके प्रभाव में-उनके सुनाये हुए नवकार मंत्र के प्रभाव से मैं देव हुआ!"

तडित्केश राजा ने हुक्म दिया 'एक एक वानर को बीध डालो ।' स्वय बीधता है, सैनिक बीधते है, यह देखकर उस देव को दया आई । वह नीचे आया । देव चाहे सो कर सकता है, इन्द्र जाल रच सकता है । उसने सैकडो वडे वड़े वानर वना दिये, राजा ने सोचा ऐसे वानर कहॉ से आये ? सैनिक तो भागने लगे । राजा ने सोचा कि 'अवश्य दैवी उपद्रव है ।' राजा वड़े वानरो के पावो मे पडा, धनुप-वाण नीचे रखे । देव मूलरूप मे प्रकट हुआ और वोला, 'क्या कर रहा है तू ? तेरी रानी पर हमला करने वाले को तू ने मार डाला, अव दूसरो को क्यो मारता है ?'

राजा पूछता है . 'आप कौन है ?'

देव कहता है : 'मै वही वानर जिसे तू ने मारा · ····
तेरी रानी पर हमला करने वाला······· ·· ।'

राजा कहता है . आप देव कैसे वने ?'

देव ने कहा, 'चलो मेरे साथ. मै वताता हूं ।' जहॉं महामुनि खड़े थे, उन्हे वताया । उन्होने नवकार मत्र सुनाया उसके प्रभाव से मै देव हुआ । अवधिज्ञान से देखा । तेरे द्वारा किये जाने वाला सहार देखकर नीचे आया ।' उस राजा ने महामुनि को तीन प्रदक्षिणा दी और पूछा · 'हे भगवन्त ! मेरा और इस देव का कोई जन्मान्तर का सबध है ?'

महामुनि अवधिज्ञानी थे । उन्होने कहा हॉ, पूर्वभव मे तू वाराणसी नगरी का राजा था । तू ने दीक्षा ली थी । यह वानर अर्थात् देव, उस समय शिकारी था । एक समय शिकार

करने बाहर जाता था कि उसी समय तुम्हारा नगर मे आगमन हुआ। इससे उसे विचार हुआ कि 'इस मु डित का दर्शन कहा से हो गया ? अब मुझे शिकार नहीं मिलेगा। ऐसा विचारकर उसने मुनिवर पर प्रहार किया उनके प्रति द्वेष के सस्कार रहे, वे सस्कार यहा जागृत हो गये। शिकारी मरकर बीच म नरक मे गया और अन्त में वानर हुआ। तेरे प्रति उसका द्वेष तुझे देखते ही भभक पडा और तेरी रानी पर आक्रमण किया। तू ने उसे बीध डाला।

जन्म-जन्म के सस्कार

जन्म जन्मान्तर के सस्कार जीव के साथ रहते हैं। वे कई भवो के बाद भी उदय मे आते हैं। अत सावधान रहो। दुष्ट सस्कार न रहने पावें। मरने के पहले इन सस्कारो को मिटा दो। राग-द्वेष असूया, वैर विरोध आदि के सस्कार मिटा डालने के लिए पर्युषण पर्व आता है। दुष्ट सस्कार पडे हो तो उन्हे मिटा डालो। क्षमा सच्चे दिल से दो। कोई क्षमा मागने आवे तो उसका तिरस्कार न करो। 'मिच्छा मि दुक्कड' सच्चे दिल से कहो, क्षमा दो ?

सभा सामने वाला क्षमा न दे तो ?

महाराज श्री दूसरा दे या न दे, आपको तो सच्चे दिल से क्षमा देनी है। भव-भव के वैर क्या साथ ले जाते हो ? उन्हे यहीं मिटा दो।

लडितवेश राजा मुनि के चरण म पडा। लका म गया और दीक्षा धारण की।

और कुछ नही, मन पर मत्र का कामण करते चलो। मन को वश मे करो मन वश मे हो जाने के वाद वह पुण्यवध मे सहायक होता है ·····कर्मक्षय में सहायक होता है, मुक्ति प्राप्त करने मे सहायक होता है।

हम सव मानव है, हमारे पास मन है। मन की स्थिरता स्थापित करो। श्री नवकार मत्र को आराधना पद्धति से करो। एक सौ आठ नवकार नियमित एक ही स्थान पर बैठकर एक दिशा मे मुख रखकर, एक ही माला मे और नियत समय पर आराधना करो। नियमित १०८ नवकार गिनोगे तो देव तुम्हारे चरणो मे हाजिर होगे, तुम्हारे जाने की जरूरत नही रहेगी।

जीवन दृष्टि :

रामायण का यह प्रसग हमे कई महत्त्वपूर्ण बाते बताता है, अभिनव जीवनदृष्टि देता है :

१. कोई वैर या द्वेष का सस्कार न पड़ जाय, वैर के सस्कार लेकर परलोक मे जाना न पड़े, इसलिए निर्वैर बनो। द्वेष को क्षमा से धो डालो।

२. जीवन मे नवकार मत्र को 'रक्षक तत्त्व' बनाओ। श्री नवकार मत्र के साथ ऐसा आन्तरिक सबध वाधो कि मृत्यु के समय वह याद आवे अथवा नवकार सुनाने वाला कोई मिल जाय। वन्दर का तो अजब-गजब का पुण्योदय था कि जीवन मे कभी नवकार नही गिनने वाले उस बन्दर को मृत्यु के समय नवकार सुनाने वाले महामुनि मिल गये! यदि हमने

जीते जी नवकार के साथ प्रीति न की तो मृत्यु के समय वह याद नही आ सकता ! तो क्या होगा यह जानते हो ? दुर्गति मे पडना होगा रौरव नरक की वेदनाएँ सहनी पडगी । अत श्री नवकार को पच परमेष्ठि भगवान को हृदय मे वसा लो ।

३ तद्वितकश राजा को इस प्रसग से वराग्य हो गया उसने दीक्षा ले ली। सयमी वन गया। ससार की एक दुघटना से समग्र ससार को पहचान लो। ससार को उसके नग्न स्वरूप मे देखकर उसका त्याग करो। मानव-जीवन स सार के सब व धनो को तोडकर मुक्ति प्राप्त करने क लिए ही है।

४ श्री नवकार महामत्र के शब्द अक्षर मे अपूव शक्ति है । य अडसठ अक्षर और उनका स योजन अद्भुत है। इन अक्षरा का ही ध्यान किया जाय तो अजव-गजव के अनभव हो, परमेष्ठि-स्वरूप प्राप्त करने के ध्यय से इस महामत्र की आराधना करो। श्री नवकार की शरण म जाकर निभय बनो।

८-८-७१

सातवां प्रवचन

संसार और मोक्ष :

जिन महापुरुष ने 'त्रिषष्ठीशलाका पुरुष-चरित्र' ग्रन्थ का निर्माण किया, उन कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य द्वारा लिखित योग विषयक एक ग्रन्थ 'योग-शास्त्र के नाम से प्रसिद्ध है। उसमे एक स्थान पर संसार और मोक्ष की वहुत ही सीधी और सरल भाषा मे समझाया है।

अयमात्मैव संसारः कषायेन्द्रिय निर्जितः।
तमेव तद् विजेतारं मोक्षमाहुर्मनीषिणः॥

'कषाय और इन्द्रियो से पराजित आत्मा ही संसार है, और कषाय तथा इन्द्रियो का विजेता आत्मा ही मोक्ष है।"

आत्मा कषायो से घिरा हुआ है और इन्द्रियों के विवश बना हुआ है, यही संसार है। कषायो के जाल और इन्द्रियो के पाश से मुक्त आत्मा ही मोक्ष है। मोक्ष की तरफ जाने का अर्थ है कषायो से मुक्त होना, इन्द्रियों की परवशता से मुक्त होना। 'मेरा प्रयाण मोक्ष के प्रति है या नही' इसका निर्णय हम कर सकते है। 'यदि मैं कषायो पर विजय पाने और इन्द्रियो की परवशता से छूटने का प्रयत्न करता होऊ तो यह निर्विवाद है कि मै मोक्ष की तरफ जा रहा हूं। परन्तु कषायों और इन्द्रियो मे अधिक लिप्त होता जाऊ तो मेरा प्रयाण मोक्ष के प्रति नही इस संसार मे ही गहरा गिरता जा रहा हूं।'

कषाय और इन्द्रियों को जीतो

कषाय चार है क्रोध, मान, माया और लोभ। इन्द्रियाँ पाच हैं श्रवणेन्द्रिय से स्पर्शनेन्द्रिय तक। इन्द्रियो के पाच विषय हैं शब्द, रूप, रस, गध और स्पर्श। इनके आवान्तर प्रकार असख्य है।

कषायो मे क्रोध और मान राग के प्रकार हैं और माया तथा लोभ द्वेष के प्रकार हैं। इनसे कसे छूटा जाय ? इन्द्रियो के आकर्षण से कसे छूटें ? विषय-कषाय से हमारी आत्मा कस छूट, इसका विचार महात्मा पुरुषो ने किया है। उन्होने जो कहा है और जो लिखा है वह इसी भावना से कि 'ससार के जीव विषय-कषाय से छूटे।'

महात्माओं की करुणा

'त्रिषष्ठी शलाका पुरुष चरित्र' के सातवे भाग मे रामायण लिखी गई है। यह सब लिखकर उन्होने ससार के जीवो को विषय कषाय से मुक्त होने का मार्ग बताया है। जिससे राग द्वेष बढ, विषय-कषाय बढ, ऐसा महात्मा न तो बोलते हैं और न लिखते हैं। राग द्वेष की परिणति जीवो की कसे कम हो इसके लिए ही यह सब धर्म का निरूपण है। राग के प्रसग को भी इस तरह बताया जाता है कि वराग्य हो। द्वेष के प्रसग को बताते हुए भी दृष्टिकोण एसा होता है कि देखने वाले और समझने वाले को वराग्य आवे, शांति मिले, सदाचार आदि का बल प्राप्त हो। यह सब निरूपण करने का सूनो है।

तत्त्वदृष्टि

मान लो कि आप अपने बालको के साथ बगीचे मे घूमने

गये। हरी हरी कोमल घास पर वालक चल रहे है। उस घास के विषय में दो दृष्टिकोण वता सकते हैं १. यह भी कह सकते हो कि 'यह घास कितना मुलायम, हरा-हरा, गलीचा जैसा है।' वालक उसे गलीचा जैसा मुलायम मान कर उस पर लौटने को तैयार हो जावेंगे। उसी घास को आप दूसरी तरह से भी वता सकते हैं। २ देखो, यह घास है, यह वनस्पतिकाय कहा जाता है। अपनी तरह इसमे भी जीव है। अपने पर कोई पाव रखे तो दु.ख होता है या नही ?

वालक कहेंगे : 'हाँ होता है।'

तव आप कहे . 'तो वनस्पति के जीव को दुख होता है या नही ?'

वालक यदि पूछ वैठे कि–'दुख होता है तो हमारी तरह वनस्पति के जीव वोलते क्यो नही ?' तो आप क्या जवाव देंगे ?

वालक कहे कि 'दुख होता है तो हम चीस पाड़ते है तो ये वनस्पति के जोव चीस क्यो नही पाडते ?

कहिये, क्या जवाब देंगे ? लड़के के पिता हो न ?

सभा—एकेन्द्रिय जीव है।

महाराज श्री · नही, बालक एकेन्द्रिय मे नही समझता। परतु आप उसे कहे कि 'तेरे मुह मे कोई डूंचा लगा दे, हाथ पकड़कर जकड़ दे आँखे वन्द कर दे, फिर चीस निकलती है ? वालक कहेगे-नही ,तब चीस नही निकलती। तव आप कहें कि 'जिसका मुह ब-द है, कान बन्द है, आख वन्द है, वह चीस

कसे पाडे ? उसकी चार इन्द्रियाँ बन्द हैं। आख कान, नाक और मु ह बन्द किये हुए है केवल स्पर्शेन्द्रिय है। उसक स्पश करो तो उसे दुख होता है परन्तु वह मु ह से चीख नही पाड सकता। चोलो चमडी से चास निकाल सकते हो ? तो बालक कहेंगे, 'बापूजी कसा सवाल करते हो ? क्या कोई चमडी स चीस पाड सकता है ?' चीस तो मु ह मे निकलती है।' फिर उस बालक को समझावें कि इस वनस्पति मे भी आत्मा है। उस पर पाव रखें तो उसे दुख होता है।' घास को देखने का यह दृष्टिकोण कसा है ? बालक उस घास पर पाव रखकर चलना बन्द कर देगा।

दशरथ का दिव्य दृष्टिकोण

श्री हेमचन्द्राचाय ने रामायण लिखकर उसके ऐतिहासिक पात्र इस रीति से बताय हैं कि उनमे दिय गय दृष्टिकोण से उन पात्रो को देख तो कदाचित् वीतराग न बन सकता वरागी तो जरूर बन सकते है।

एक छोटा सा प्रसग देखिये अयोध्या के राजमहल मे शान्ति स्नात्र पूण हुआ ऐसा रिवाज था कि कचुकी प्रत्येक रानी को स्नात्र-जल पहुचावे। दशरथ महाराजा के चार रानियाँ थी अपराजिता अर्थात कौशल्या, सुमित्रा ककेयी और सुप्रभा। चारो को जल पहुचाने के लिए कलश या कटोरे दे दिये गय। तीन रानिया के यहा तो स्नात्र-जल पहुच गया परन्तु कौशल्या के यहा नही पहुचा।

कौशल्या मन मे सोचती है, 'य तीन रानियाँ भाग्यशाली हैं जिन्हे स्नात्र-जल मिल गया। मैं कमी अभागिन हु कि मुझे

वह जल नही मिला। मुझे महाराजा भूल गये उनके हृदय मे मेरा कोई स्थान नही, तो फिर जीने का क्या अर्थ ? ऐसा विचारकर वह अपने कमरे मे गई और फाँसी लगाने का प्रयत्न किया।

उस समय चूहे मारने की गोलियाँ न थी। नीद की या खटमल मारने की दवा न थी ! आपके घर मे तो ये नही होगी न ?

सभा—'होती है'

आपके घरो में-जैनो के घरो मे चूहे मारने की या खटमल मारने की दवा है। इतने निर्दय वन गये है ? दयाहीन वनकर आप वीतराग धर्म के आराधक वन सकेगे ऐसा मानते हो ? ध्यान रखना इन जीवो को मारने की दवाओ से आपका ही विनाश होने वाला है।

उस समय तो ऐसे साधन नही थे। कौशल्या क्रोध मे आ गई। 'भगवान का जल प्राप्त करने का सौभाग्य मुझे नही मिला, मै ऐसी अभागिन बन गई अर्थात् महाराजा के दिल मे मेरे लिए स्थान नही।' फाँसी की तयारी हो गई कि उसी समय दशरथ महाराजा वहाँ पहुच जाते है। 'यह क्या' कौशल्या के हाथ पकड़े। 'यह फाँसी क्यो ? क्या हुआ ?

कौशल्या : 'मैं अभागिन हू। भगवान् का स्नात्र-जल प्राप्त करने का भी मुझे सौभाग्य नही। सवको मिला, मुझे क्यों नही मिला ?'

दशरथ ने कहा : 'अरे, मैने तो चारो रानियो को जल भेजा है।'

यो बात चल ही रहो थी कि अति वृद्ध कचुकी धीरे-धीरे चलता हुआ वहाँ आया। स्नातजल का कटोरा कौशल्या को दिया।

कौशल्या बोली 'क्या इतनी देर की? सबको जल्दी मिल गया और मुझे इतनी देर से?'

कचुकी कहता है 'देवी! जरा मेरे जराजर्जरित शरीर की तरफ तो देखो।'

कौशल्या देखा अनदेखा करती है। परन्तु महाराजा दशरथ उसकी तरफ बराबर देख रहे है।

महाराजा दशरथ ने देखा कचुकी के बाल सफेद हो गये है। हाथ पाव की नस दिखने लगी हैं आखो के उपर भौहे सफेद हो गई हैं, मु ह से लार टपक रही हैं।

महाराजा दशरथ उस देह को देखते हैं परन्तु देखने का दृष्टिकोण भिन्न है। वह देखकर वे विचार मे पड गये एक दिन मेरा शरीर भी ऐसा ही जावेगा। वृद्धावस्था से घिर जावेगा इन्द्रिया शिथिल हो जावेगी। शरीर की शक्तिया क्षीण हो जायगी। उस समय यदि मैं आत्मसाधना करना चाहूंगा तो भी कर नही सकूंगा।

'विविध प्रकार के रसायन, औपधि और आहार से पुष्ट किया गया यह शरार एक दिन श्मशान की राख बन जाएगा तब कोई यत्र, तत्र, मत्र, देव या दवा नही बचा सकेंगे।' दशरथ महाराजा का शरीर पर से महत्व उतरा हो तो वह कौशल्या के वृद्ध नौकर को देखने के बाद। उस वृद्ध नौकर को कसी

ज्ञानदृष्टि से दशरथ ने देखा ? आप भी घर मे वृद्ध व्यक्ति को देखते है न ? किस दृष्टिकोण से देखते हो ?

महाराजा दशरथ हमको ज्ञानदृष्टि देते है। उन्हे उस रात मे नीद नही आती, निरन्तर विचार आते रहते है कि, अन्त मे यह दशा है ! तो फिर शरीर पर ममत्व क्यों ? अभी तक मेरी इन्द्रियाँ शक्तिशाली है, शरीर मे शक्ति है तो आत्म-साधना कर लूँ।' वाद मे उन्होने चारित्र की वात अपने परिवार के समक्ष रखी।

देखने देखन में अन्तर है। प्रसग या घटना एक होने पर भो एक दृष्टि हमको रागी वनाती है और दूसरी दृष्टि विरागी भी वनाती है ! एक दृष्टि यौवन देती है, दूसरी दृष्टि वृद्ध बनाती है !

वृद्ध नौकर और आज का सेठ :

महाराजा दशरथ की जगह आप हो तो क्या विचार करो ? 'ऐसे वृद्ध को कैसे रखा जाय ? पेन्शन दे देनी चाहिए ! ऐसे लोगो को रखना ही क्यो चाहिए ? यह तो अच्छा हुआ कि मैं आ गया, नही तो कौशल्या फाँसी लगा लेती।' सच कहो, ऐसा विचार कर वृद्ध नौकर को भगा दो या नही ? महाराजा दशरथ जैसा विचार करोगे क्या ?

सभा · यह तो निमित्त पर अवलम्वित है।

अरे ! निमित्त तो एक ही है। परन्तु निमित्त को देखने का दृष्टिकोण न वदले वहाँ तक कुछ होने वाला नही।

आपके कार्यालय का व्यक्ति वृद्ध हो, वह फाइल उठाने मे असमथ हो तो आप कहेगे 'ऐसा वृद्ध आदमी नही चाहिए जवान खून' (Young blood) चाहिए।' कहेगे न ऐसा ?

किसी भी प्रसग को किस दृष्टिकोण से आप देखते है, इस पर सब कुछ निभर है। जिन नमित्तो को पाकर आत्माओ ने केवल ज्ञान प्राप्त किया, जिन निमित्तोमे सत-पुरुष हुए, वे निमित्त आज भी हैं। क्या आज बूढे नही है ? क्या आज अरथी नही है, जिसे देखकर गौतम बुद्ध को वराग्य हुआ था ? आपको हुआ ? क्या आजकल पिगलाएँ नही है ? जिस पिगला क व्यभिचार से भत हरि को वराग्य हुआ था। आज ऐसी पिगलाओ के पतियो को वराग्य होता है ?

निमित्ता का बहाना न करो। निमित्त तो विश्व मे सब है। उन्हे देखन का, समझन का दृष्टिकोण-दिव्यदृष्टि नही, ऐसा कहो।

वाचन में भी ज्ञानदृष्टि

अखबारो मे मच्छर मारन की दवा का विज्ञापन आता है उसे पढा है ? 'हां, कहो न ? उसमे क्या बिगडता है ? एक ही निमित्त है उसको पढकर आपको क्या विचार आया, वह बताइय मुझे क्या विचार आया वह मैं आप से कहू। आप कहग ? सच्चा (original) विचार कहेगे ? किस दृष्टिकोण से अखबार पढत हो ? अखबार पढने मे यदि ज्ञानदृष्टि न हो तो रागद्वेष की होलीमे जले समझो ! तीव्र राग और तीव्र द्वेष पदा करने का कामआज के अखबार कर रहे हैं। वाचन म भी दिव्य दृष्टिकोणचाहिए। मच्छर मारने की दवा का

विज्ञापन पढकर ऐसा विचार आता है कि 'मच्छर मे भी आत्मा है…… । मुझे दुख अप्रिय है वैसे इस जीव को भी अप्रिय है। मैं इन जीवो को कसे मारू ? ये जीव जान बूझकर मुझे त्रास नही देते तो मैं जान बूझकर इनको मारू ? मेरे सुख के लिए यदि मैं इन निर्वल जीवो को मारूंगा तो दूसरे भी अपने सुख के लिए मुझे भी मारेगे…… मुझे यह पसंद पडेगा ? नही तो फिर मैं ऐसी हिसा कैसे कर सकता हू । ऐसा विचार आया किसी दिन ?

मल्लि कुमारी तत्वदृष्टि देती है :

एक सुन्दर रूपवती स्त्री को देखकर ससारी उसे किस दृष्टिकोण से देखते हैं ? सयमी उसे किस दृष्टिकोण से देखते है।

श्री यशोविजयजी महाराज कहते है 'वह हाड, मास, मज्जा, खून आदि वीभत्स सात धातु की पुतली है।' मेरे शब्दो मे कहू तो 'वह म्युनिसिपालिटी की कचरा मोटर है।' उपर से रग चमकीला और उसका ढक्कन खोलो तो ?

मल्लिकुमारी ने ढक्कन खोला था। छह राजा इकट्ठे हुए थे। वे मल्लिकुमारी को किस दृष्टि से देखते थे ? अति सुन्दर, विषय-भोग के पात्र के रूप मे।' मल्लिकुमारी ने उन राजाओ का दृष्टिकोण बदल दिया ! उन्होने एक कारीगर से साक्षात् अपने जैसी एक पुतली बनवायी। प्रतिदिन स्वयं भोजन कर लेने पर एक कौर उस पुतली के पोले भाग मे डालती थी। यो, कई दिन बीत गये। छहो राजाओ को महल मे बुलवाया। अलग-अलग दरवाजों से बुलवाया। बीच मे पुतली इस तरह रखी गई थी कि छहो राजा देख सके। उसे देखकर राजा गण

स्तब्ध हो गये। मन म सोचा कि 'जसा मुना था। उससे भी अधिक अद्‌भुत और मुदर यह मल्लिकुमारी है। यह मिल जाय तो जिदगी सुखी बन जाय।'

जसे ही वे राजा समीप आत है, मल्लिकुमारी ने तरकीब से उस पुतली का ढक्कन खोल दिया। चारो आर दुर्गध फल गई। भयकर दुर्गध निकली। तब मल्लिकुमारी ने दिव्य ध्वनि से कहा 'जिस पर मोहित हो रह हो वह अदर से ऐसी है। केवल गौरी चमडी मढी हुई है। इस चमडी पर क्यो मोहित हा रहे हो? यह शरीर मोहित हान जसा नहं।'

राजा मल्लिकुमारी के ऊपरी रगरूप को दखते थे चमडी के रगरूप को। अत रागी बने थे। मल्लिकुमारी ने उनके दृष्टिकोण को बदल दिया। चमडी के अदर का स्वरूप दिखा दिया। दृष्टि बदल गई। राग गया, वैराग्य हो गया। मल्लिकुमारी वहा की वही थी। पहले उनको वाहर से दखत थे अब अदर से दखने लगे। केवल हड्डिया, मास क लोथ, लोही की नदिया। इन पर राग होव? अरे, घृणा आवे दखकर वमन हो जाय।

केवल दृष्टिकाण बदलो। जगत् तो अच्छे और बुरे सभी निमित्तो मे भरा हुआ है। जो बुद्धिमान है जो विवेकी है उनके लिए अशुभ भी शुभ निमित्त बन सकत हैं। राग का पात्र वराग्य का निमित्त बन सकता है। द्वेष का पात्र भी वराग्य का निमित्त बन सकता है। मल्लिकुमारी ने राग क निमित्त को वराग्य का निमित्त बना दिया और छह राजा वरागी बने। किसी प्रसग को किस दिव्यदृष्टि से दखना सुनना, यह सीखे बिना उद्धार नही -- और सब झझट छाडो।

हनुमानजी सन्ध्या को देखते है :

सन्ध्या के रंग को तो प्रत्येक देखता है, परन्तु उस रग को वास्तविक रूप मे हनुमानजी ही जान पाये। सन्ध्या भरपूर खिली है, क्षितिज पर प्रकाश फैला हुआ है। हनुमानजी आनद मे मग्न है, परन्तु पन्द्रह मिनिट मे तो देखते-देखते रंग गायब हो गये ! क्षितिज अन्धकार पूर्ण हो गया। हनुमानजी को विचार आया कि 'सन्ध्या के रग इतने क्षणिक ! क्षणभर पहले खिले और क्षणभर मे गायब ! जीवन के रग भी ऐसे ही है ! ये कब खिले और कब गायब हो जाय ?

'सन्ध्या के क्षणिक रग जैसे इस जीवन के भी रग है। ऐसे क्षणिक नाशवान जीवन पर-जीवन के सुखो पर क्या राग करना ? हनुमानजी को वैराग्य हो गया। चारित्र लेकर वे आत्म-साधना मे लीन हो गये।

बंगाली बाबू की ज्ञानदृष्टि :

शान्ति-निकेतन (कलकत्ता) की स्थापना के बाद की एक सच्ची घटना है। कलकत्ता मे एक बगाली बाबू थे खूब धनाढ्य थे। उनके एक ही सतान-कन्या थी। उनकी उम्र ४०-४५ वर्ष की और कन्या की उम्र ८-१० वर्ष की होगी। उनकी पत्नी का स्वर्गवास हो गया था। एक समय वह कन्या स्कूल से पढकर सन्ध्या के समय घर आई। उसने कहा, 'बाबूजी ! अभी तक दिया नही जलाया ? शाम हो गई, अधेरा छा गया।' इन शब्दों को पिता ने सुना। ये शब्द ही उनके लिए वैराग्य के निमित्त बन गये : उन्होने सोचा: 'सचमुच जिन्दगी की सन्ध्या हो गई. ...।'

चार बजे बाद सूर्य अस्ताचल की तरफ जाता है न? सूरज नीचे चला जाता है। उसने सोचा, 'मेरी जिंदगी इस सूर्य की तरह अस्ताचल की ओर जा रही है, मैंने अभी तक ज्ञान का दीपक नहीं प्रकटाया। समय बहुत बीत गया है, अंधेरा छा गया है। वह खड़ा हो गया, दीपक प्रकटाया मन में भी ज्ञान का दीपक प्रकटाने का प्रयत्न किया।

बुद्धिहीन के लिए धर्म नहीं। एकेन्द्रिय ने क्या अपराध किया? उसके लिए धर्म क्यों नहीं? क्योंकि उसके पास मन नहीं। आपके पास बुद्धि है। बुद्धि होते हुए भी क्यों मूर्ख बन रहे हो? विचार करने की बात है। छोटी सी बालिका के शब्द सुने और वह बंगाली बाबू ज्ञानदीप प्रकटाने के लिए तैयार हो गये। उन्होंने अपनी सम्पत्ति का वसीयत नामा लिख दिया। अपनी कन्या को स्वजनों को सौंप कर वे शान्ति-निकेतन चले गये और वहीं अपनी जिन्दगी व्यतीत की।

टाँकी और पत्थर

सुनने के लिए कान चाहिये। ये चमड़े के कान काम नहीं देते। उसके लिए दिव्य कान चाहिये। देखने के लिए आंख चाहिए। इन आंखों से काम नहीं चलेगा, दिव्य आंखें चाहिए। 'लेंस बदलवाने की आवश्यकता है। लेंस बदलवाना है? पकड़कर आपरेशन थियेटर में ले जाऊं? ऑपरेशन किये बिना आप नहीं बदली जा सकती। आप सीधी तरह नहीं मानते। मैं क्या करूं?

सभा में से तो 'जबरदस्ती करिये।'

नही ! यह जानना चाहिए कि टाची किस पत्थर पर लगाई जाती है ? कच्चे पत्थर पर टाची मारी जाय तो ? पत्थर टूट जाता है, दरार पड जाती है । आप पर टाची लगाते समय विचार करना पड़ता है ! टांची लगाई जाय और घाट घड़ाता जाय तो आनन्द आता है । परन्तु दरार पड़ती हो तो ? महापुरुष टाची लगाते हे ...परन्तु हम मे दरार पडती है, घाट नही उतरता ।

कुरगडु मुनि :

एक राजकुमार था । उसका नाम ललितांग था । साधु, सत पुरुषो का परिचय हुआ और वह राजकुमार ससार का त्याग कर साधु बन गया । साधु बन जाने के बाद उनके पाप का उदय ऐसा आया कि दिन मे उन्हे खाने के लिए खूब चाहिए । दिन उगते ही वे आहार के लिए निकलते । क्षुधा वेदनीय कर्म के उदय से भूख लगती है । उन्हे खाने के लिए कुछ न कुछ चाहिए ही ! अग्नि में भले लकड़िया डालो या कोयले डालो ! पूजा किये हुए कोयले ही चाहिए, ऐसा नियम है क्या ? यह मुनि घडा भरकर लूखे भात लाते । लाकर गुरु महाराज को बताते । प्रत्येक साधु को प्रार्थना करते 'लाभ दीजिये ।' साधुओ को निमन्त्रित करने के बाद आहार करने का कल्प है । इस तरह प्रतिदिन चलता था । इतने मे पर्युषण पर्व आ गये । सवत्सरी का दिन आ गया । उन मुनि को आहार लाये बिना चल नही सकता था । वे घड़ा लेकर आहार लाने निकले । इसी उपाश्रय मे दूसरे चार मुनि थे-जिन्होने चार २ मास के उपवास किये थे । उपाश्रय मे रहना और सवत्सरी के दिन आहार के लिए निकलना ! तब मन मे क्या विचार आता है,

यह आपको पना नहो। खूब दुख होना है, ह ाय फ ाा है ! अरे ! ये सब तपस्वो तपस्या करते हैं और मैं अभागा खाता हू। मैं कोई तप नहो कर पाना।'

चार भाई कमाते हो और एक भाई कमाता न हो तो उसे कसा दुख होता है ! अरे ! मैं बठा रहता हू।' इसी तरह सब तप करत हा और मैं कुछ न कर सकता होऊँ तो कितना दुख होता है ?

वे मुनि आहार के लिए निकलत हैं। घडा भरकर भात लात हैं। भात कैसा ? लूखा ! घी रहित भात सवत्सरी के दिन ! उपाश्रय मे चर्चा चली, कच कच शुरु हुई दीक्षा ली ! राजकुमार थे ! क्या देखकर दोक्षा ली ? आज भी उपवास नही ? खाऊँ खाऊँ ? कौन सी गति मे जावेगा ऐसा पेटू ? तियञ्च योनि से आया है क्या ?' ऐसी चर्चा यहाँ चल रही है। इतने मे वह मुनि आ गये। साधु के नीति नियम तथा विवेक के अनुसार प्रत्येक साधु को निमन्त्रण देना चाहिए ! य मुनि प्रत्येक साधु के पास गय। 'लाभ दीजिय' लाभ दीजिय।' चार मास के तपस्वी साधुओ के पास गय। लाभ दीजिय। इस पापी को तारिय' ऐसा आग्रह किया। उन मुनियो ने कहा 'अरे अभागे ! आज सवत्सरी का दिन है। तो भी खाना नही छोडता है ? 'थू' ऐसा कहकर उ होने भात के पात्र में थूक दिया।

यह कसी घटना बनी ? उन मुनि के स्थान पर यदि हम-आप हो, कर्त्तव्य बुद्धि से विनति-प्रार्थना करने जाय तब सत्कार करना तो दूर रहा ऊपर स थूक। उस थूकने वाले के प्रति कसी अरुचि हो ? कितना द्वेष उत्पन्न हो ?

वे चार साधु तपस्वी थे। उन्होंने उस मुनि के पात्र मे थूंका। इस प्रसग को वह मुनि किस दृष्टिकोण से देखते है? इसमे रहस्य छिपा हुआ है। उन्होंने किस दृष्टि से उस प्रसग को देखा। उनके पास तप-शक्ति नही थी किन्तु ज्ञानदृष्टि जरुर थी!

हमारे पास यदि ज्ञानदृष्टि हो तो आत्मा की अनत शक्ति को पाताल मे मे भी बाहर खेच कर ला सकते हैं। ज्ञानदृष्टि 'ड्रीलिंग मशीन' है। हजारो फीटे नीचे वह उतर जाती है और तेलादि वस्तु को ऊपर खिच लाती है।

उन मुनि ने क्या विचार किया? 'अहो! आज मेरा भाग्य खुल गया है। मैं लूखे भात लाया, इन महामुनियो ने उसमे घी डाला!' थूक मे घी की कल्पना करते है। तपस्वियो के मुंह का अमृत इसमे पडा है, अब यह आहार मेरे तप-अन्तराय को तोडने वाला होगा।'

वे मुनि विचारो मे आगे बढ़ते गये। 'अरे जीव! तेरा स्वभाव तो अनाहारी है। शुद्ध स्वरूप मे तू निर्मल है अनत काल से लगी हुई इस पुद्गल की झझट को तोड़ो, इससे छुटकारा प्राप्त करो।'

हाथ मे कौर है और उन मुनि की विचारधारा आगे आगे बढती गई। ध्यान मे आगे चढते-चढ़ते वे मुनि केवलज्ञानी हो गये! उन्हे पूर्ण ज्ञान हो गया, चराचर विश्व को देखने की शक्ति प्राप्त हो गई। शासन देवी वहॉं स्त्री रूप लेकर पधारी। वे चार तपस्वी मुनि परस्पर बातचीत कर रहे है। उन्हे पूछा: 'कुरगडु महामुनि कहॉं है?' उन मुनि का नाम तो था ललितांग

मुनि परन्तु कूर' अर्थात् भात और 'गडु' अर्थात् घडा। घडा भरकर भात खाने वाले होने से 'कुरगडु नाम ऐतिहासिक बन गया।

उन मुनियो ने कहा 'वह ? वह बठा कोने मे बैठा-बठा खा रहा है।'

जहाँ केवलज्ञान हुआ वहा देवो की दुदुभी बज उठी।

देव नीचे उतरकर आये। उन चार मुनियो को अचम्भा हुआ। किसे केवलज्ञान हुआ।' शासनदेवी तो नाराज हो गई। किसे तुम पेटभरा कहत हो ? कुरगडु को ? अरे ! उह तो के ल्ज्ञान हो गया है।

'उसे 'क वलन्ान ?' चारो तपस्वी आश्चय चकित हा गये।

कुरगडु मुनि को केवलज्ञान हुआ। हाथ मे कौर और केवलज्ञान ! चारा मुनियो ने खडे होकर अन्त करण पूवक उनसे क्षमा याचना की। धम ध्यान और शुक्ल ध्यान चढते-चढते उनको भी केवलनान हो गया। केवल्ज्ञान दूर नही। एक काम करो दृष्टि बदलो। चमदृष्टि से ज्ञानदृष्टि वाले बनो।

खधक मुनि

खधक मुनि की चमडी उतारी गई। आजकल तो ऐसे भयकर उपसग भी नही, आजकल तो साधु-महाराज को बहुत अनुकूलताएँ है। प्रतिकूलताएँ लगभग ग्रथों म ही रह गई हैं।

खधक मुनि की चमडी उतारी जा रही है और उह उसी समय केवलज्ञान कसे हो गया ? चमडी उतारने वाले के प्रति

उनकी कैसी दिव्यदृष्टि होगी 'तू मेरे शरीर की चमड़ी उतार, मै कर्म की चमडी उतारता हू !

शरीर की चमडी औदारिक पुद्‌गलो की है और आत्मा पर लगी हुई कर्मो की चमडी कार्मण वर्गणा के पुद्‌गलो की है ! शरीर की चमड़ी उतरे उस समय समता समाधि यदि रहे तो कर्मो की चमडी उतर ज ती है। खधक मुनीश्वर के पास यह तत्त्वदृष्टि थी। इनके मन के चन्दनवन मे तत्त्वदृष्टि रुपी मयूरी सदा विचरती थी तो वहाँ भय के भुजग कैसे रह सकते थे ! मयूरी को देखते ही सर्प भाग जाते है, ढीले पड़ जाते है। तत्त्वदृष्टि मयूरी है ! योगी पुरुषो का, महात्माओ का ऐसा दृष्टिकोण होता है।

लवकुश :

लवकुश ने लक्ष्मण की मृत्यु को किस दृष्टिकोण से देखा ? कौनसा कोण था। साठ डिगरी का या नव्वे डिगरी का ? कौन से कोण से सीधा दीखता है ?

सभा : नव्वे डिगरी के कोण से

महाराज श्री : तो नव्वे डिगरी का कोण चाहिए ? तभी सीधा देखा जा सकता है ! सीधा विचार चाहिए, टेढा-मेढा नही। लवकुश ने इतना ही विचार किया कि, 'काका का ऐसा अकाल अवसान ? काल को लज्जा नही। वे तो वासुदेव थे। हमारी तो शरम काल को क्या आवे !' उन्होने सोचा कि, काल जीव को यो अचानक उठा ले जाता है !'

यह मानव जीवन आत्मा को प्राप्त करने के लिए है, यह याद रखिये। व्यर्थ गँवा देने के लिए। उसी समय लव और

कुश वहा से निकल गये, त्यागो वरागो श्रमण बन गय। इस तरह मृत्यु के तात्विक अवलोकन ने उनको वरागी बनाया।

आप कितनो को सोनपुर में रख आये ? कितने वृद्धो को देखा ? ऐसा दृष्टिकोण अपनाइये जसा दशरथ महाराजा ने अपनाया, जसा लवकुश ने अपनाया। रामायण मे ऐसे अनेक प्रसग हैं उनको ज्ञानदृष्टि से देखने का प्रयत्न करो। जीवन मे ज्ञानदृष्टि तत्वदृष्टि को स्थान द तो जीवन की रौनक ही बदल जाय।

'निंदक क प्रति ज्ञानदृष्टि

ज्ञानदृष्टि जीवन का अमृत है। विश्व के दर्शन मे, श्रवण और वाचन म ज्ञानदृष्टि आवश्यक है।

एक व्यक्ति निदा की बात करता हुआ आया कि, 'अमुक आपको ऐसा कह रहा था, आपकी ऐसी निंदा कर रहा था' यह एक प्रसग ले लीजिये। इस विषय मे आप क्या विचार करगे ? मिलने पर बात करेंगे।' तुम्हारे पास यौवन हो, सत्ता हो तो उसको वारह बजा दोगे न ? शक्ति न हो तो मन मे जला करोगे न ? वह न सुने इस तरह गाली दोगे न ? कमजोर और क्या करे ?

आपके पास यदि ज्ञानदृष्टि हो तो आप उस निदा की बात करने वाले से कहें कि वह मेरी निदा करता है यह ठीक है। वह विल्कुल सच कहता है क्या तुम मुझे अच्छा समझत हो ? उसने तो मेरे दो-चार दोप बताये परन्तु उसे पता नही कि

मुझ मे तो अनन्त दोष है। तुम्हारा निन्दक तुम को आत्म-निरीक्षण करने का सुन्दर अवसर देता है !

लायकरगस :

स्पार्टा देश मे 'लायकरगस' नाम का एक तत्त्वज्ञानी हो गया है। वह विद्वान् था। उसने अच्छी पुस्तके लिखी है। उसके भी विरोधी तो थे ही।

एक समय एक व्यक्ति जो उसकी उन्नति नही देख सकता था-उसको गालिया देता हुआ उसके पीछे चला जा रहा था। लायकरगस घर पहुचा तो वह व्यक्ति भी गाली देता हुआ उसके घर गया ! तत्वज्ञानी ने उसका स्वागत किया। वह व्यक्ति तो घटा दो घटा तक गाली देता रहा…… फिर शान्त हो गया !

झगड़ालू बुढ़िया :

क्रोध मे अधिक देर तक बोला नही जा सकता। एक बुढ़िया की ऐसी आदत कि वह हर किसी से झगडा करती रहती। झगडे बिना उसे खाना नही भाता था। मोहल्ले के सब व्यक्ति उससे परेशान हो गये थे, त्रस्त हो। गये उस बुढिया का घर का मकान था अत. खाली तो कराया नही जा सकता था। फिर वह थी पैसे वाली। क्या किया जाय ? मोहल्ले वालों ने मिल कर नक्की किया कि प्रतिदिन प्रति घर से एक व्यक्ति उससे झगडा करने जाय। एक समृद्ध परिवार की बारी आई। उस परिवार में एक नव-परिणीता पुत्रवधू थी, वह बुद्धिमती थी परन्तु उसे झगड़ने कैसे भेजो जाय ? सासू जाए या पुत्रवधू

जाए ? पुत्रवधू ने कहा–'माताजी कल अपनी बारी है। मैं जाऊंगी।'

सासू–'अरे तुझे कैसे भेजी जाए ? लोग क्या कहेगे देखो, कैसी सासू है ? नव परिणीत पुत्रवधू को भेजी है झगडा करने !' परन्तु पुत्रवधू ने बहुत ही आग्रह किया तो सासू ने इजाजत दे दी।

वह पुत्रवधू जरा देर से पहुची। झगडा करने का निमित्त तो होना चाहिए न ? इतने मे तो 'रेडियो पाकिस्तान गरज उठा ! जोरदार भाषण ! बुढिया ने तो उसके आते ही चिल्लाना शुरू किया 'क्यो देर से आई ? तुझे भान नही ?' इस तरह १५-२० मिनिट चिल्ला चिल्ला कर बुढिया थक गई शान्त हुई वहा तक कौन जवाब दे ? बाद मे पुत्रवधू ने कहा ऐसे ही आना होता है।' फिर मौन ! बुढिया ने फिर चिल्लाना शुरू किया ! 'स्वीच' ऑन हो गया ! बुढिया ने रौद्र रूप मे गालिया देना शुरू किया परन्तु थोडी देर मे थक गई।

इतने मे पुत्रवधू ने कहा देर से आएँगी, तरे से हो वो कर ले !' इस तरह एक घटे तक बुढिया को हँफायी। बुढिया बेहोश हो गई। फिर पुत्रवधू ने उसके विलेपन किया, पानी छाटा, हवा की। भान मे आने पर पुत्रवधू ने कहा 'माताजी, इस मानव अवतार को कुत्ते का अवतार क्यो बनाती हो ? जो बहुत झगडा करता है, क्रोध करता है वह मरकर कुत्ता होता है। कुत्ता अपनी गली मे दूसरे कुत्ते को देखता है तो शान्त नही रह सकता है।

पुत्रवधू ने एक मुसीबत टाल दी । 'सामायिक करो; प्रतिक्रमण करो । नवकार गिनो और आवश्यक होने पर मैं आपके घर आऊगी । अपन साथ मे धर्म-ध्यान करेगे ।' इस तरह पुत्रवधू ने उस बुढिया के स्वभाव को बदल दिया । उसको नवकार गिनने वाली, सामायिक करने वाली बना दी । क्रोध लम्बे समय तक नही टिकता । बोलने वाला थक जाता है । कपाय दीर्घ समय तक नही रह सकता । उसमे परिवर्तन लाने के लिए अलग अलग दृष्टिकोण अपनाने पड़ते है ।

पुत्रवधू ने उस बुढिया को 'यह जीवन झगड़ा करने के लिए नही, किन्तु कपायो को शान्त कर सद्गति प्राप्त करने के लिए है,' यह ज्ञानदृष्टि दी ।

वह निन्दक गाली देकर थक गया, तब लायकरगस ने कहा . 'आज रात को आप यही रहिये । प्रशसा के शब्द सुनने से आत्म-निरीक्षण नही होता था । आपने निन्दा करके उपकार किया । आज यही रह जाइये ⋯ मुझे आत्म निरीक्षण करने का अवसर दीजिये ।

गालिया देने पर भी यदि सामने वाला व्यक्ति क्रोधित न हो तो वह मनुष्य कहा जा सकता है । यदि क्रुद्ध हो जाय तो क्या कहा जाय ?

उस गाली देने वाले व्यक्ति को विचार आया कि, 'यह कैसा अजीब आदमी है ।' वह तो जाने लगा । तब लायकरगस ने कहा, 'जरा ठहरो, लालटेन लाकर तुम्हे रास्ता बताने आऊ और तुम्हारे घर तक पहुचा दू ।'

जीवन के ऐसे प्रसगा को नम्रता से सरलता मे हल करने करने की कला आनी चाहिए ।

मोक्रेटिस

एक बार सोक्रेटिस की पत्नी ने बहुत झगडा किया । मोक्रेटिस का नियम था कि ऐसे समय मौन रहना । पत्नी खूब झगडी । सोक्रेटिस घर मे बाहर निकले, तब उनकी पत्नी न उनक मस्तक पर ऊपर से झूठन की बाल्टी उडल दी ! सोक्रेटिस बोले ,घर मे गजना हो रही थी अब वर्षा हुई ! गजना के बाद वर्षा होती ही है '

मन का कैसा समाधान किया । प्रसग हल्का बन गया । वह तो अनार्यभूमि मे ज मा था, आप तो आर्यभूमि म जन्मे हैं न ? शान्ति रख सकते है न ?

सभा शान्ति कहाँ से आवे ?

महाराज श्री शान्ति आती है आत्मा मे स ! शान्ति आती है ज्ञानदृष्टि से ! विचार करो, चिन्तन करो । कोई प्रसग रागद्वेष का निमित्त न बने, तीव्र राग या तीव्र द्वेष न होने पावे, ऐसी समझ पैदा करो, ऐसी तत्वदृष्टि प्राप्त करो ।

उपसहार

राग द्वेष से बधा हुआ आत्मा ससार ! और रागद्वेष स

सीमा पर खड़े हुए सैनिक एक ही वात का ध्यान रखते हैं कि शत्रुओ से कैसे वचा जाए और उन्हे कैसे समाप्त किया जाय ! वैसे ही हमे भी 'राग द्वेष से कैसे वचे और उनको कैसे खत्म करे यह लक्ष्य रख कर जीवन जीना चाहिए ।

जिस प्रसग से अज्ञानी जीव घोर कर्म का वध करता है, उसी प्रसग से आप अनत कर्मों की निर्जरा कर सकते हैं । ऐसे दिव्य दृष्टिकोण से रामायण का अध्ययन करना चाहिए । प्रत्येक पात्र ज्ञानदृष्टि—तत्वदृष्टि देगा । इस तत्वदृष्टि से आत्मा को शुद्ध, वुद्ध, निरजन, निराकार वनाइये, यही मगल अभिलाषा !

१५-८-७१

श्री खरतरगच्छीय ज्ञान मन्दिर, जयपुर